हिमाचली लोकनाट्य

धाज्जा, करियाला एवं बरलाज

(एक प्रामाणिक विवेचन)

(चानो बली, चन्द्रावली एवं रामचन्द्र का यशोगान)

अमर देव आंगिरस

हिमाचली लोकनाट्य

धाज्जा, करियाला एवं बरलाज

(एक प्रामाणिक विवेचन)

(चानो बली, चन्द्रावली एवं रामचन्द्र का यशोगान)

अमर देव आंगिरस

ISBN:978-93-5258-183-2

संस्करण :- 2015
मूल्य :- 195/-

दयावन्ती प्रकाशन
अंगिरा भवन, समीप उद्यान विभाग,
दाड़लाघाट (अर्की) जिला-सोलन
हिमाचल प्रदेश - 171102
दूरभाष :- 01796-248153
मोबाईल : 94181-65573, 97367-87200
email - amardevangiras@gmail.com

(Himachali Loknatya Dhajja, Kariala Aivam Barlaaj)

चित्र :
अविनाश आंगिरस

समर्पण

बाबा बली चानो -- 'धाज्जा' के नायक
राधा की सखी चन्द्रावली - 'करियाला' की लक्ष्मी

एवं

भगवान रामचन्द्र - बरलाज' के नायक
के चरणों में
समर्पित
एवं
परमपूज्य विद्वान आचार्य पं. परसराम गौत्तम शमेली
को श्रद्धापूर्वक सादर भेंट।

"आकाश पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्
सर्वदेव नमस्कार : केशवं प्रति गच्छति।"

अर्थातः-जैसे आकाश से गिरी हुई जल की एक-एक बूंद
समुद्र में जाकर मिलती है, वैसे ही प्रत्येक देवी-देवता
को किया गया प्रणाम परमात्मा (ईश्वर)
को ही प्राप्त होता है।

भूमिका
लोक-नाट्यों का उद्भव

'धाज्जा-नाट्य' द्वापर युग के महायोद्धा चाणूर के पौरुष एवं चरित्र से जुड़ा आख्यान है। श्रीमद्भागवत पुराण कथा के अनुसार चाणूर मथुरा के राजा कंस के महाबलियों में, दरबार में सबसे शक्तिशाली योद्धा था। कंस-कृष्ण युद्ध से पूर्व कृष्ण का चाणूर से दो दिनों तक घोर युद्ध हुआ था। कृष्ण महान योद्धा एवं युद्ध कौशल से पूर्ण होने पर भी उसे हरा नहीं सके थे। लोक-मान्यताओं के अनुसार कृष्ण ने छल-बल एवं कूटनीति से चाणूर को हराया था। उसे हराने अथवा मारने के लिए कृष्ण को साम-दाम-दण्ड-भेद की नीति अपनानी पड़ी थी। वे चाणूर की अपेक्षा कंस को आसानी से मार सके थे।

चाणूर की इसी वीरता एवं पौरुष के कारण जन साधारण ने उसे कृष्ण के साथ सम्मान दिया तथा कृष्ण की तरह स्मरण किया। हिमाचल में धाज्जा नाट्य चाणूर को ही समर्पित है। हिमाचल प्रदेश में धाज्जा नाट्य विशुद्ध धार्मिक आस्था एवं अभिचारों का लोकनाट्य है। समय के साथ-साथ इसमें लोकरंजन का उद्देश्य भी जुड़ गया।

शास्त्रीय व्याख्या के अनुसार 'नाटक' में एक कथावस्तु के साथ पात्र तथा चरित्र-चित्रण, संवाद, अभिनय, अन्त आदि तत्व होते हैं। तथा एक नायक का वृतान्त प्रमुख होता है। इस दृष्टि से 'धाज्जा नाटय' पूर्ण रूप से नाटक की तरह तो नहीं, किन्तु अभिनय प्रधान एवं काव्यमय होने के कारण नाट्य की श्रेणी में आता है। नाट्य का अभिप्राय ही अभिनय से है। धाज्जा के सभी प्रसंग धार्मिक होने के साथ-साथ रोचक होने के कारण लोकरंजन करते हैं, जिसके कारण दर्शक मंत्रमुग्ध होकर आस्था के साथ 'धाज्जा' का आनन्द रात भर उठाते हैं। इसमें विभिन्न धार्मिक आचारों के साथ स्वांग भी प्रस्तुत किए जाते हैं। वस्तुतः 'धाज्जा' का अभिप्रायः चाणूर को एक राजा के रूप में हाथी पर बिठाकर ताज (मुकुट) पहनाने से है। इसीलिए इस नाट्य का नाम 'धाज्जा' अथवा 'ताज्जा' पड़ा है। स्थान विशेष के अनुसार इसे दहाजा, दाजा भी कहा जाता है।

प्राचीन काल से भारतवर्ष में नाटकों की दो धाराएं मिलती है। दरबारी अथवा संभ्रान्त लोगों के लिए खेले जाने वाले नाटक एवं दूसरे जनसाधारण अथवा निम्न वर्ग के लिए खेले जाने वाले लोक नाटक। राजमहलों में रंगमंच की व्यवस्था होती थी जिनमें राजा एवं उसके आस-पास के अमीर एवं सम्पर्क के लोग नाटकों का आनन्द ले सकते थे। संस्कृत-साहित्य में शास्त्रीय ढंग से विद्वता प्रकट करने हेतु महाराजाओं को नाटक समर्पित किए जाते थे। इन शास्त्रीय नाटकों के लिए इन्हें पारिश्रमिक एवं उपहार मिलते थे। समय के साथ कुछ नाटक विशुद्ध पठनीय बन गये। संस्कृत नाटकों में यह स्पष्ट देखा जा सकता है। प्रेम प्रसंगों पर आधारित नाटक इस वर्ग के मनोरंजन के लिए प्रमुखता से लिखे गये।

राजमहलों में 'कृष्ण लीला', 'राम लीला', 'भागवत कथाएं' आदि विषयों पर नाटक अभिनीत किये जाने लगे, किन्तु ये भी साधारण जनता के मंनोरंजन के लिए नहीं थे। राजा के सम्पर्क के कुछ लोग इनका आनन्द उठा सकते थे। इनके विषय पवित्र ग्रंथों में वर्णित कथानकों 'कृष्ण-राधा', 'राम-सीता', महापुरुषों के नैतिक चरित्रों पर आधारित रहते थे। समय के साथ सत्यवादी हरिशचन्द्र, ध्रुव भक्त, भक्त प्रहलाद जैसे कथानकों पर आधारित नाटक खेले जाने लगे। इनमें धार्मिक दृष्टि के साथ प्रेम प्रसंगों पर आधारित प्रसंग भी सम्मिलित किये जाने लगे। मध्यकाल से पूर्व भारत में इस प्रकार के नाटकों का समृद्ध रूप पाया जाता है। राजाओं के प्रश्रय में रहने वाले कवि-लेखकों ने सुन्दर साहित्य की रचना की।

दूसरी धारा जनसाधारण द्वारा लोकनाट्यों की परम्परा बनी। निम्न वर्ग एवं जनसाधारण ने खुले मंचों, उत्सवों आयोजनों आदि में लोक-विषयों पर आधारित तथा सम्भ्रान्त वर्ग के नायकों को छोड़कर उपेक्षित से विषयों को लोक नाट्यों के कथानकों को चुना। उनके अपने नायक, पूर्वज एवं इष्ट कथानकों के विषय बने। यह सम्भ्रान्त वर्ग के नाटकों की प्रतिक्रिया के रूप में सामने आया-यह माना जा सकता है।

"करियाला" लोक नाट्य पहाड़ों में राणा-ठाकुरों द्वारा राज्य स्थापित करने के पश्चात अस्तित्व में आया है। प्रारम्भ में दरवारों में कवि गायक कलाकार अपने हुनर का प्रदर्शन करते थे। राजमहलों में रंगमहल, रंगमंच, क्रीडालय आदि मनोरंजन के साधन थे। क्रीडालयों में राजा-रानी, सामन्त चौसर, शतरंज, पासा, एवं द्युत आदि खेलते थे। इस प्रकार के अनेक प्रसंग राजाओं, बादशाहों की कहानियों में मिल जाते हैं।

क्रीडालयों में हल्का-फुल्का मंनोरंजन, उन्मुक्त प्रेम प्रसंग एवं गतिविधियाँ स्वाभाविक थीं। वास्तव में खेल भी एक 'स्वांग' ही तो था। इसकी प्रतिक्रिया अथवा अनुकरण पर जन-साधारण द्वारा मंनोरंजन के लिए प्रकृति के खुले वातावरण - गाँव के चौपाल, देवस्थल अथवा उत्सवों पर 'स्वांग' द्वारा सामाजिक विसंगतियों एवं धार्मिक देव भावना को उजाकर करना भी स्वाभाविक था। विभिन्न प्रकार की क्रीडाओं अथवा स्वांगों से 'करियाला' का रूप अस्तित्व में आ सका।

'करियाला' शब्द दरबारों के 'क्रीडालय' की गतिविधियों का व्यंग्यात्मक प्रारूप बना जिसमें धार्मिक आधार पर गीत-संगीत एवं रूपकों द्वारा साधारण जनता का मंनोरंजन होने लगा।

करियाला मूलतः सोलन (प्राचीन महासू जनपद) एवं सिरमौर क्षेत्रों से सम्बन्धित माना जाता है, किन्तु लोकनाट्यों के अन्य रूप बांठड़ा, स्वांग, हरणयात्तर, चन्द्रवली, धाज्जा, बरलाज, हरिंङफो आदि रूप भी इसके समकालीन ही अस्तित्व में आये होंगे। रजवाड़ों से पूर्व कोई सामाजिक व्यवस्था विधिवत रूप से लोकनाट्यों के रूप में नहीं मिलती। वैसे आदिकाल से आदिवासी क्षेत्रों में स्वांगों द्वारा मंनोरंजन एवं प्रसन्नता प्रकट करना स्वाभाविक रूप से था।

सोलन जनपद की लोक संस्कृति के इस पक्ष को जनसाधारण तक पहुंचाने के उद्देश्य से मैंने यह लघु-प्रयास किया है। इस जनपद पर इस प्रकार की सामग्री बहुत कम उपलब्ध है, अतः 'धाज्जा', 'करियाला' एवं बरलाज जैसे विषयों पर सामग्री संकलन करने का प्रयास किया गया है।

'शिवालिक विरासतः सोलन जनपद की लोक देव परम्परा' एवं 'घाटियों में बिखरी कथाएँ' पाठकों ने पसन्द कीं। इसके लिए मैं सुधी

पाठकों का आभार प्रकट करना चाहता हूँ। पाठकों एवं आस्थावान पाठकों की प्रेरणा एवं आग्रह पर मैंने 'धाज्जा' एवं 'करयाला' पर लिखने का साहस किया है। धाज्जा, करयाला पर स्वतंत्र रूप से अलग लिखने का विचार था, किन्तु एक साथ संकलित करने से तथ्यों की पुनरावृति भी हुई है इसके लिए पाठक क्षमा करेंगे।

आशा है साहित्य प्रेमी एवं आस्थावान पाठक पूर्व की तरह इस पुस्तक को पसन्द करेंगे। अपने स्तर पर पुस्तक प्रकाशित की है, अतः प्रूफ आदि की त्रुटियों के लिए पाठक क्षमा करेंगे। पाठकों द्वारा मूल्यवान परामर्श एवं जानकारी के लिए सदैव उत्सुक रहूंगा। अन्त में -

"ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात पूर्णमुदच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।"

"सृष्टि में कुछ भी पूर्ण नहीं है। सम्पूर्ण सृष्टि-ब्रह्माण्ड-सब ईश्वर में ही समाहित होते हैं। सब अदृश्य शक्ति का खेल है। वही पूर्ण है।"

विनीत

अमरदेव आंगिरस

विषय-सूची

1
लोक-नाट्य धाज्जा एवं धार्मिक आस्था

मानव-विकास के साथ ही मनोविनोद के लिए नाटकों की उत्पत्ति हुई है। प्राचीन सभ्यताओं में प्राकृतिक-शक्तियों की पूजा तथा मृत-पूर्वजों के पवित्र-स्थान, पूजने0020की परम्परा मिलती है। वृक्षों, चबूतरों, लौह-छड़ों एवं सरोवरों आदि को जातिगत पुरखों के प्रतीक रूप से पूजा जाने लगा। इन्हें अन्न-फलों के साथ खालें, आदि चढ़ाए जाने लगे। धीरे-धीरे इन्हें विभिन्न-प्रकार के मुखौटे पहनाए जाने लगे। इनके प्रति श्रद्धा के साथ लोकरंजकता का भाव भी उत्पन्न हुआ। अच्छी और बुरी प्राकृतिक-शक्तियों को पहचान दी गई। प्रसन्नता के अवसरों पर इनके मुखौटे लगाकर नृत्य प्रस्तुत किए जाने लगे और नाट्यों की उत्पत्ति हुई।

प्राचीन सभ्यताओं में यूनानी सभ्यता को रंगमंच के जन्म दाता के रूप में मान्यता मिली है, यद्यपि यह संभव नहीं है कि अन्य सभ्यताओं में लोकरंजन के लिए 'मुखौटा-नृत्य' अथवा देवताओं की नकल उतारने की परम्परा वर्तमान न रही हो। यूनान में सुखांत से अधिक दुखान्त नाटकों की परम्परा रही। डायोनिसस उनका शराब-उत्पादन का देवता था, जिसने उन्हें अंगूर उगाना और शराब बनाना सिखाया था। बसंत में, यानी अंगूर के बागों में काम शुरू होने से पहले और दिसम्बर में शराब तैयार होने पर उसके सम्मान में उत्सव आयोजित किए जाते थे। डायोनिसस के उत्सवों के दिनों में यूनानी किसान गांवों और नगरों की सड़कों पर जुलूस निकालते थे

और सामूहिक रूप से गाकर डायोनिसस की कथाएं सुनाते थे। वे इस प्रकार स्वांग रचते थे कि जैसे वे खुद ही इन कथाओं के पात्र हों। बकरी की खाल ओढ़कर वे डायोनिसस के गण वनदेवता सटीरो की नकल उतारते थे। सटीरों की कल्पना लम्बे बालों तथा बकरी जैसे पैरों वाले आदमी के रूप में की जाती थी। जल-स्रोतों की देवियों को कुंवारी कन्याओं के रूप में चित्रित किया जाता था तथा इन्हें निंफ-वधू कहा जाता था। इनका स्वांग देखते काफी भीड़ जमा हो जाती थी। धीरे-धीरे ये प्रदर्शन या तमाशे एक टीले अथवा तम्बू में होने लगे। इन तम्बुओं में दृश्यावलियां एवं मंच सज्जाएं टांग दी जाती थीं। इसे "स्कीन" कहा जाता था। तम्बू के आगे एक चबूतरा होता था, जिसे आर्केस्ट्रा कहा जाता था। उस पर मंडली समूहगान करती थी। इस प्रकार छठी शताब्दी ईसा पूर्व के अंत और पांचवी शताब्दी ईसापूर्व में एथेंस में यूनान की पहली रंगशाला या प्रेक्षागार का निर्माण हुआ। यूनानी उसे 'थियाट्रोन' कहते थे जिससे 'थियेटर' शब्द निकला है।

भारतीय नाट्य-परम्परा में ब्रह्मा ने नाट्य-वेद की रचना पांचवे वेद के रूप में की है। आचार्य भरत ने द्वितीय शताब्दी ईसापूर्व अपने 'नाट्य-शास्त्र' में इसकी विस्तृत विवेचना की है। इसी काल में धनंजय ने अपने 'दशरुपक' में नाट्य-वेद को वेदों के सारतत्व के रूप में निकाल कर ब्रह्मा जी द्वारा लोकहित में नाट्यवेद की रचना का उद्देश्य माना है। भरत जी ने अभिनय कराया। शिव एवं पार्वती ने इसमें ताण्डव तथा लास्य नृत्य जोड़ा। इस प्रकार नाटक लोकोन्मुख बनाया। महाकवि कालिदास के नाटकों के अतिरिक्त संस्कृत-साहित्य में नाटकों की समृद्ध परम्परा मिलती है। ईसापूर्व पहली शताब्दी में विक्रमादित्य के समय में उसके नवरत्नों में कवियों के साथ नाटककार भी थे। इसी प्रकार सम्राट हर्ष एवं महान राजा भोज के दरबारों में महापुरुषों के जीवन-चरित रंगशालाओं एवं प्रेक्षागृहों में अभिनीत होते थे। राजदरबारो में 'रासलीलाएं' एवं काव्य नाटक सम्भ्रान्त वर्ग के मनोविनोद के लिए सीमित थे। ये नाटक अभिजात्य वर्ग के लिए होने के कारण आम आदमी से दूर थे। अतः एक अलग शाखा 'लोक नाट्य' के

रूप में अस्तित्व में आई। ऐतिहासिक-अध्ययन से पता चलता है कि जहां सम्भ्रान्त वर्ग के नाटकों के पात्र धीरोदात्त एवं वीर-काव्यों के नायक होते थे, वहां निम्न वर्ग ने गौण-पात्रों को भी लोक-नाट्यों में अपने अनुकूल पाया। उच्च वर्ग के प्रमुख पात्र राम, परशुराम, कृष्ण, राधा, नारायण, वामन आदि थे तो निम्न वर्ग के प्रमुख पात्र रावण, सहस्रबाहु, चाणूर पहलवान, चन्द्रावली, असुर, बलि आदि गौण पात्र थे। वर्णाश्रम के कठोर नियमों के कारण लोकमानस ने स्वाभाविक रूप से अलग धारा में बहने की प्रक्रिया को अपनाया। राजाओं की रंगशालाओं में शालीनता, शास्त्रीयता को अधिमान था तो प्रकृति के खुले-प्रांगण में लोक-नाट्यों में सहजता, सरलता, व्यंग्यमयता तथा धार्मिकता थी।

दरबारों में 'क्रीड़ालय' थे तो जनसाधारण ने इसे 'करयाला' अथवा 'करियाला' का नाम दिया। वस्तुतः समस्त देश के दरबारों में क्रीडालयों का स्वाभाविक विकास हुआ होगा, हिमालय की पहाड़ी रियासतों में मध्यकाल में मध्यभारत से पलायन किए रजवाड़ों-शासकों ने अपने साथ विरासत में आई इस विरासत को यहां पुष्पित-पल्लवित किया। मध्यभारत में मालवा, गुजरात, दक्षिण भारत में 'रासलीला' एवं 'कृष्णलीला' आदि की परम्परा थी, जो यहां के रियासती दरबारों में अभिनीत होने लगी।

हिमाचली लोक-नाट्यों का विकास सामन्त-युग अथवा रजवाड़ा काल 15वीं-16वीं शताब्दी में हुआ। दरबारों में रासधारी 'रासलीला' एवं 'रामलीला' का आयोजन करते थे तथा जनसाधारण में लोक नाट्यों करयाला, बांठड़ा, स्वांग, बरलाज, धाज्जा, भगत, हरणात्तर, हरण, बुढ़ड़ा, होरिङफो आदि का स्वाभाविक प्रचलन हुआ। लोक-नाट्यों का प्रचलन समस्त रियासतों में विभिन्न रूपों में समान रूप से चलता रहा।

'करयाला' का प्रचलन सिरमौर तथा प्राचीन महासू (सोलन) के क्षेत्रों में यहां के प्रख्यात लोक देवता विजेश्वर (बीजू देव) की पूजा अर्चना से सम्बन्धित था। देवता की छमाही पूजा के पश्चात शरद की सुहानी रातों को 'करयाला' का आयोजन होता था जो वर्तमान समय तक विभिन्न

आंशिक-रूपों में त्यौहार मनाने के निमित्त प्रस्तुत होता रहा है। 'करयाला' के समानान्तर ही 'धाज्जा' लोक-नाट्य की प्रस्तुति निम्नवर्ग द्वारा प्रस्तुत की जाने लगी।

लोक-नाट्यों में हास्य-व्यंग्य के साथ देव-आस्था एवं धार्मिकता का पुट दिया गया ताकि ये विधाएं चिरस्थायी रहें तथा जनसाधारण अपनी श्रम की थकान को तथा सामाजिक विसंगतियों को काव्यमय रूप से लोक-नाटकों में व्यक्त कर सके।

2
लोक-नाट्य-धाज्जा

'धाज्जा', भागवत पुराण में वर्णित भगवान कृष्ण के साथ युद्ध करने वाले महाबली पहलवान चाणूर की वीरता की विरुदावली है जो मान्यताओं के अनुसार कृष्ण से कई दिनों तक युद्ध करता रहा, किन्तु पराजित न हो सका। अन्त में कृष्ण ने छल से उसे पराजित कर मार डाला, किन्तु अमरता का वरदान दिया। इससे सम्बन्धित अनेक दन्तकथाएं एवं मान्यताएं निम्न वर्ग में प्रचलित रहीं। धाज्जा लोक नाट्य प्रमुखतः सोलन, सिरमौर, बिलासपुर, मण्डी एवं ऊना (कांगड़ा) में विशेष रूप से प्रचलित रहा है।

'धाज्जा' नामकरण के विषय में विद्वानों के विभिन्न विचार हैं। धाज्जा को 'दाहजा', 'दाजा' तथा 'ताज्जा' आदि नामों से स्थानों के अनुसार पुकारा जाता है।

कुछ लोग धाज्जा शब्द को 'दादा' शब्द का अपभ्रंश मानकर इसे 'बारु' नामक भगत से जोड़ते हैं जिसे वृद्ध हो जाने पर लोग 'दादा' कहकर पुकारते थे। जनश्रुति के अनुसार अकबर के शासन काल 16वीं शती में तारु और बारु नामक दो भाइयों को स्वप्न में सिद्ध चानो प्रकट हुए और बतलाया कि जब तक बादशाह अकबर अपने राज्य में मेरी

स्थापना नहीं करता तब तक यह राज्य प्लेग की महामारी से रोग मुक्त नहीं हो सकता उन दिनों राज्य में सैंकड़ों लोग प्लेग से मर रहे थे।

जब यह बात तारु और बारु ने अकबर को बताई तो अकबर ने सिद्ध चानो की प्रतिष्ठा अपने राज्य में करवाई तथा चानो की सेवा में 5 बोरे सुच्चे मोती अर्पित किए। तारु और बारु को पुरस्कार प्रदान किए एवं तांत्रिक का स्थान दिया। तत्पश्चात उनका राज्य रोगमुक्त हुआ।

एक अन्य जनश्रुति के अनुसार जब आनन्दपुर रियासत में लोग अज्ञात बीमारी की चपेट में आ गए तो महाराजा आनन्दपुर ने तांत्रिक तारु-बारु को ईलाज हेतु दिल्ली से आनन्दपुर बुलाया। दोनों भाइयों के तांत्रिक प्रयासों से वह राज्य रोगमुक्त हो गया। महाराजा ने उन्हें ईनाम में जमीन-जायदाद प्रदान की। किन्तु एक दिन दोनों भाइयों में जमीन के लिए झगड़ा हो गया। झगड़े के समय बारु दातुन कर रहा था। वह इतना दुःखी हुआ कि उसने आनन्दपुर छोड़ने का फैसला किया। उसने आराध्य देव चानो (चाणूर) से प्रार्थना की कि 'मेरा कल्याण करना'। रात को बारु को सिद्ध चानो ने दर्शन दिया और कहा "तुम अपनी इच्छानुसार जहां चाहो चले जाना, किन्तु झगड़े के समय जो दातुन की टहनी तुम्हारे हाथ में थी उसे वहां की जमीन में गाड़ना। जहाँ उसमें कोंपलें फूटेंगी तो समझना कि मैं (चाणूर) प्रकट हो गया हूँ। तुम वही निवास करना"।

भगत बारु जहाँ-जहाँ ठहरे, वहाँ नये-नये चमत्कार हुए। इनमें सिद्ध चानो के 'थान' बने हैं। ये स्थान हैं - मलेटा का थान (नैनादेवी के समीप) कोटधार, सूहा, फुफली, झूलाना का थान, (बिलासपुर)। 'रेती' नामक स्थान पर दातुन की टहनी से कोंपले फूट पड़ी थी। बारु उसी स्थान पर बस गया। वृद्ध होने पर लोग उसे 'दादा' बारु कहने लगे।

'दादा' से 'धाज्जा' शब्द परिवर्तित हुआ हो, यह भाषा तथा धार्मिक-आस्था की दृष्टि से तर्कसंगत नहीं लगता।

कुछ श्रद्धालु 'धाज्जा' को 'दाजा' या 'दहेज' से अपभ्रंश रुप मानते हैं, किन्तु इष्ट देवता को दहेज की वस्तुओं के रूप में कोई भी श्रद्धालु भेंट नहीं करता। यह विचार भी तर्क से परे लगता है।

एक अन्य तर्क के अनुसार 'धाज्जा' शब्द 'ध्वजा' शब्द का अपभ्रंश है, क्योंकि चानों की पूजा-अर्चना में ध्वजा चढ़ाई जाती है। किन्तु 'ध्वजा' तत्समूनिष्ठ होने के कारण ऐसा नहीं लगता कि ध्वजा से धाज्जा या ताज्जा शब्दों की उत्पति हुई हो। यों भी प्रायः प्रत्येक लोक-देवता को ध्वजा चढाई जाती है, यह कोई विशेष आधार नहीं हो सकता। यूं भी झण्डे को जनसाधारण द्वारा ध्वजा कहने का प्रचलन कम ही मिलता है।

वस्तुतः धाज्जा-नाट्य के नाटकीयकरण एवं हस्तबली की झांकी के कारण, जिसमें चाणूर को विशालकाय हाथी पर बिठाये, सिर पर मुकुट 'ताज' पहनाये एक शक्तिशाली राजा का रूप प्रस्तुत किया जाता है - 'ताजा' शब्द की व्युत्पत्ति संभव लगती है। धाज्जा नाट्य का सारा उपक्रम चानों को ताज पहनाकर, लाल वस्त्र, कानों में कुण्डल तथा हाथ में खड्ग धारण करवाकर एक महाबली राजा के रूप में प्रस्तुत करना रहा है। धाज्जा में सबसे अधिक खर्चिला प्रदर्शन अथवा स्वांग हस्तबली का ही होता है। चाणूर ने एक बलशाली राजा की तरह कई दिनों तक कृष्ण से युद्ध किया था। इस प्रकार कोई योद्धा महापराक्रमी राजा ही हो सकता था।

अतः जनसाधारण ने अपने प्रिय योद्धा सिद्ध चानो को राज-ताज (मुकुट) पहनाने के कारण इस नाट्य को 'ताज' 'ताज्जा' नाम दिया - यह तर्कसंगत लगता है। भाषा शास्त्र की दृष्टि से भी जनसाधारण भाषा में परिवर्तन जटिलता से सरलता की ओर करता है तथा महत्त्वपूर्ण शब्दों पर बलाघात से ध्वनि-परिवर्तन करता है। 'ताज' पहनाने की प्रक्रिया अर्थात 'ताज्जा' 'धाज्जा'।

3
श्रीमद्भागवत पुराण में वर्णित सिद्ध चानों की मूल कथा

महाबली चाणूर और भगवान कृष्ण के पराक्रम के विषय में श्रीमद्भागवत पुराण के दसवें स्कन्द में विस्तृत वर्णन मिलता है। द्वापर-युग में श्रीकृष्ण के बराबर कोई भी योद्धा नहीं टिक सकता था। कंस के अखाड़ें में ढ़ाई दिनों तक युद्ध करने के कारण संभवतः महाराजा कंस के प्रमुख योद्धा-पहलवान चाणूर को इसीलिए लोक जनमानस ने कृष्ण के समान स्थान दिया तथा उसकी वीरता के कारण ही उसे देवता बना दिया।

कृष्ण जिन्हें गोकुल-वृन्दावन में कान्हा, कन्हैया आदि नामों से पुकारा जाता था, उन्हें बाल्यकाल से ही अद्भुत चेष्टाओं नटखटपन तथा वाचालता के कारण विशेष स्थान एवं वात्सल्य - प्रेम प्राप्त हुआ। देवकी के आठवें गर्भ की रक्षा वसुदेव की प्रार्थना पर गोकुल के गोप-स्वामी नन्द ने इसीलिए की कि मथुरा के राजा कंस के अत्याचारों से यह बालक ही मुक्ति दिला सकता था।

मथुरा के राजा कंस ने ज्योतिषी की भविष्यवाणी को सही मानकर बाल-कृष्ण को मारने के असंख्य प्रयत्न किये, लेकिन निष्फल रहे, बालपन में कृष्ण ने गोकुल में इतने चमत्कार किए थे कि लोग उनमें अलौकिक शक्ति मानने लगे थे। बचपन में पूतना राक्षसी का वध, बंधे शकट से मुक्त होना, भारी ओखली खींच देना, वत्सासुर और वकासुर का वध, अधासुर,

धेनुकासुर वध और फिर यमुना में कालिया नाग का दमन करना उनके अद्‌भुत पराक्रम थे। फिर लड़कपन में गोपों को जंगल की आग से बचाना. प्रलंभासुर का वध उनके अलौकिक शक्ति के परिचायक थे।

कृष्ण लड़कपन में ही इतने लोकप्रिय हो गये थे कि गोप-गोपियां उनके नटखटपन और सौन्दर्य पर मोहित थे। व्रज की गोपियां उनसे दूर नहीं रह सकती थीं। उनका प्रेम निस्वार्थ, वात्सल्यपूर्ण एवं वासना रहित था। भागवत पुराण में गोपियों के प्रेम-विरह-मिलन की उच्चकोटि का काव्यमय वर्णन मिलता है जिसमें लोकरंजनकता का पुट सहस्रों वर्षों से इतना बढ़ा-चढ़ाकर किया गया है कि बाल-कृष्ण विश्व के सबसे बड़े रसिया लगते हैं। वास्तव में उनकी वीरता एवं अद्‌भुत सलोने व्यक्तित्व के कारण उन्हें जीवन के उपरान्त 'ईश्वर' का रूप प्राप्त हो सका। किशोरावस्था में उन्होंने सहस्रों गोपियों के साथ यमुना-के मीलों फैले छोरों पर शरद-पूर्णिमा को महारास किया था। कृष्ण-मिलन के इस महोत्सव में यमुना-कुलीनों में प्रत्येक गोपी प्रसन्नता से नृत्यरत्त यही अनुभव कर रही थी जैसे नटखट कृष्ण उनके साथ नृत्यरत्त हों।

महारास के पश्चात भी उन्होंने व्रज में शंखचूड़ तथा अरिष्टासुर जैसे अधर्मियों का वध किया था। उनके पराक्रम की इन घटनाओं से महाराजा कंस बहुत भयभीत था। उसने कृष्ण की हत्या के अनेक षड्‌यन्त्र किये, किंतु सफल न हो सका था।

अब कंस ने अपने विश्वस्त दरबारियों अक्रूर, और केशी नाम के असुर को पास बुलाया। उसने केशी को आदेश दिया कि तुम व्रज में जाकर कृष्ण और बदलेव को मारो। इसके बाद कंस ने महाबलशाली मुष्टिक, चाणूर, शल, तोषल आदि पहलवानों को कुवलयापीड़ हाथी के महावत को तथा सब मंत्रियों को बुलाकर कहा - "हे चाणूर, मुष्टिक आदि पहलवानों, सुनो। वसुदेव के बेटे कृष्ण और बलदेव नंद के व्रज में रहते हैं। नारद जी ने मुझे सूचना दी है कि उनसे मुझे मृत्यु प्राप्त हो सकती है। इसलिए मैं

उन्हें यहाँ बुलाकर मरवाना चाहता हूँ। मैं धनुषयज्ञ और द्वंद्व युद्ध के बहाने कृष्ण-बलदेव को यहाँ बुलाकर मारना चाहता हूँ।

"तुम अपने दाँव-पेच की चतुराई से उनको मार डालना। तुम भाँति-भाँति के मंच और उनके बीच में एक विशाल अखाड़ा बनाओ। पुरी और गांव के लोग उन मंचों पर बैठकर इस दंगल (कुश्ती) को देखें। हे महावत, तुम भी उस दिन रंगमंच (अखाड़े) के दरवाजे पर कुवलयापीड़ हाथी को लाकर खड़ा करना। जब मेरे शत्रु दोनों भाई अखाड़े में आने लगे, तो उन्हें पहले ही वहीं पर मार डालना। चतुर्दशी के दिन तन्त्रोक्त विधि के अनुसार शिव की प्रसन्नता के लिए धनुष-यज्ञ का आयोजन किया जाये और वरदानी भूतनाथ रुद्र की पूजा में अनेक पशुओं का बलिदान किया जाये।"

स्वार्थी कंस ने इस तरह महावत और पहलवानों को आज्ञा देने के बाद यादवों में श्रेष्ठ अक्रूर को अपने पास बुलाया और एकान्त में ले जाकर कहा - "अक्रूर जी, आप मेरे परम मित्र और हितैषी है। आपसे बढ़कर मेरा कोई मित्र नहीं है। आज आप को मेरा एक काम करना होगा। जैसे शक्तिशाली इन्द्र ने विष्णु का आश्रय लेकर अपने सब कार्य सिद्ध किये वैसे ही आप भी मेरी कार्यसिद्धी कीजिये। हे मित्र, आप आज ही नन्द के व्रज में जाइये। वहाँ वसुदेव के दो पुत्र कृष्ण और बलदेव रहते हैं। उनको शीघ्र ही द्वंद्व युद्ध एवं धनुष-यज्ञ प्रतियोगिताओं में भाग लेने के बहाने यहां मथुरा ले आइये। उन्हें प्रलोभन एवं पुरस्कार की बात में फंसाना। नन्द आदि गोपों से भी कहना कि वे दरवार में भिन्न-भिन्न प्रकार की भेंटे लेते आयें। यहाँ आने पर मैं काल के समान अपने हाथी से उनको मरवा डालूंगा। यदि वे किसी तरह हाथी से बच भी गये तो वज्र के समान कठोर अंग वाले फुर्तीले पहलवान उनको जीवित नहीं छोड़ेंगे। उनके मर जाने पर शोकाकुल वसुदेव, उनके बन्धुओं और अन्य भोज, वृष्णि, दाशार्ह आदि यादवों के कुल को और वसुदेव के शुभचिन्तकों को मैं सरलता से मार डालूँगा। मित्र, तब इस पृथ्वी पर मेरा कोई शत्रु नहीं रह जायेगा तब मैं

निष्कंटक राज करूंगा। मेरे ससुर जरासंध और प्रिय मित्र द्विविद, वान, शंबरासुर, नरकासुर, वाणासुर आदि अपने हितकारियों की सहायता से देवपक्ष के राजाओं को मारकर मुझे सम्पूर्ण पृथ्वी का चक्रवर्ती राजा बनाएंगे। इसलिए आप शीघ्रातिशीघ कृष्ण और बलदेव को धनुष-यज्ञ और मथुरापुरी की शोभा-समृद्धि के बहाने यहाँ ले आइये।"

विवशतापूर्ण अक्रूर ने कंस के आदेश को शिरोधार्य कर ब्रजमण्डल की ओर जाने की योजना बनाई। उसके महायोद्धाओं चाणूर, मुष्टिक आदि ने कृष्ण की पराजय की तैयारी की।

उधर कंस ने केशी नाम के भयानक असुर को कृष्ण को मारने के लिए भेजा। वह असुर एक विशाल घोड़े का रूप धारण कर वेग से सरपट दौड़ता व्रज में आकर उपस्थित हुआ। उसकी भयंकर हिनहिनाहट सुनकर सारा, व्रजमण्डल स्तब्ध रह गया। तब किशोर कृष्ण ने उसे ललकारा। एक भयानक द्वंद्व-युद्ध में कृष्ण ने केशी को जमीन पर पटक दिया और घूंसों के प्रहारों से चित कर दिया।

अक्रूर से सहमति के अनुसार कृष्ण-बलदेव उसके साथ रथ पर बैठकर मथुरा पहुंचे। राजमार्ग में उन्होंने अपने चमत्कार से कुब्जा नाम की सुन्दरी जो कुबड़ी थी, उसे सीधा कर दिया। आगे धनुष-भवन में प्रवेश करके कृष्ण ने देखा, वहाँ इन्द्र धनुष के समान एक बहुत बड़ा भारी घनुष रखा है, उसकी रक्षा बहुत से सैनिक कर रहे थे। कृष्ण चन्द्र ने जबरदस्ती धनुष को बाएँ हाथ से उठाकर, उस पर डोरी चढ़ाकर, पलभर में बीच से तोड़ डाला। जो रक्षक कृष्ण-बलदेव से लड़ने आये, वे मृत्यु को प्राप्त हुए।

कंस ने जब सुना कि बड़े चमत्कारिक रूप से कृष्ण ने धनुष तोड़ डाला और रक्षकों को भी मार डाला तो वह अत्यन्त भयभीत हो गया। चिन्ता के कारण उसे रात भर नींद नहीं आई। उसे स्वप्न में अपशकुन दिखाई देने लगे। जागते भी उसने देखा कि जल में उसकी परछाई तो दिखाई पड़ती है पर उसका सिर नहीं दिखाई देता। उसे अपनी परछाई में छिद्र दिखाई देने लगे। सोते में कंस ने देखा, प्रेत उससे लिपट रहे हैं, वह

गधे पर नंगा सवार है, सिर से पैरों तक तेल से नहाया हुआ है। इस प्रकार मृत्यु के भय और दुश्चिन्ता से उसे नींद नहीं आई।

दूसरे दिन सवेरा होते ही कंस ने उठकर मल्ल-क्रीड़ा के महोत्सव के आरम्भ के लिए कर्मचारियों को आदेश दिए। सेवकों ने रंगभूमि (अखाड़े) को भली-प्रकार सजाया। तुरही, ढोल, नगाड़े बजने लगे। पताकाओं और फूलों से रंगभूमि चमकने लगी। भिन्न-भिन्न मंचों पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, प्रतिष्ठित, राजा, रईस और गणमान्य पुरवासी विराजमान हुए। रंगभूमि में अनेक भीमकाय मल्ल द्वंद्व-युद्ध के लिए उछल-कूद करने लगे।

कृष्ण और बलराम भी प्रमुख द्वार से रंगभूमि की ओर चले। एकाएक उन्होंने देखा एक विशालकाय हाथी पर बैठा महावत उनको रुकने का आदेश दे रहा है। यह देख कृष्ण ने कहा - "अरे महावत, राह से हट जा"।

यह सुनकर महावत बहुत कुपित हुआ। बोला-अरे लड़को, तुम्हारा मल्ल क्रीड़ा से क्या मतलब? तुम रंगभूमि में नहीं जा सकते। कृष्ण को कंस की छद्म नीति का पता था, बोले - 'तुम रास्ते से हाथी को हटाते हो या नहीं?' महावत ने ताना मारा - 'यदि हटा सकते हो तो तुम्ही हटा लो।' महावत ने समझ लिया था कि कुवल या पीड़ हाथी महाबलशाली होने के कारण पल भर में ही उन दोनों भाइयों का काम तमाम कर देगा इसलिए हंसने लगा।

महावत के इशारे भर से कुवलयापीड़ ने कृष्ण को सूंड में पकड़कर ऊँचाई से पटक दिया। कृष्ण तो युद्ध विद्या में प्रवीण थे, अचानक संभलकर खड़े हो गये। हाथी आगे से सूंड से कृष्ण पर बार करता था, किन्तु वे हाथी को पूंछ से पकड़कर गिराते थे और भूमि पर घुमाने का उद्योग करते थे। कुछ क्षणों में ही कृष्ण ने हाथी को सूँड से पकड़कर ऊँचाई से गिरा कर पटक दिया जिससे कुवलयापीड़ का अन्त हो गया। महावत और अन्य रक्षक भी पटक-पटक कर मार डाले गए।

कुवलयापीड़ के मारे जाने पर कंस क्रोध से पागल हो गया। जैसे ही कृष्ण-बलराम रंगभूमि में पहुँचे समस्त नगरवासी उन बहादुर किशोरों के रूप-सौन्दर्य, बलिष्ठ शरीर और तेजोमय मुखों को देखकर विस्मित और आनन्दित हुए।

अब महाराज कंस को अपने सर्वश्रेष्ठ पराक्रमी योद्धा चाणूर पर ही विश्वास था कि वहीं कृष्ण को परास्त कर सकता है। यह उसका अन्तिम दुस्साहस भी था।

जैसे ही कृष्ण-बलराम ने अखाड़े में प्रवेश किया तभी दूसरी ओर से महाबली चाणूर और मुष्टिक द्वंद्व युद्ध के लिए रंगमंच पर उपस्थित हुए। इस बेमेल मलयुद्ध पर लोगों को आश्चर्य भी था किन्तु कृष्ण-बलराम के कौशल का भी पता था। करतल ध्वनि के बीच महाकाय चाणूर कृष्ण से और मुष्टिक बलभद्र से भिड़ गये। हाथों से हाथ और पैरों से पैर पकड़कर जीतने की इच्छा से दोनों बली एक-दूसरे को अपनी ओर खींचनें लगे। दोनों प्रतिद्वंद्वी मल्ल कलाइयों से कलाइयों पर, जानुओं से जानुओं पर, सिर से सिर पर, छाती से छाती पर परस्पर प्रहार करने लगे। परिभ्रामण (चारों ओर घुमाना) विक्षेप (रेलना), परिरंभ (लिपटना), अवपातन (गिराना), उत्सर्पण (छुटकर सामने आना), अपसर्पण (पीछे हटना), उत्थापन (नीचे वाले को समेटना), उन्नयन (हाथों को ऊपर उठाना), संचालन और स्थापन (नीचे लिटाना) आदि दांव-पेचों से योद्धा आपस में टकराने लगे। तरह-तरह के दांव-पेच कृष्ण और चाणूर लड़ रहे थे। बराबर की टक्कर लग रही थी। अखाड़ें में द्वंद्व-युद्ध से भयानक चित्कारें हो रही थीं। किसी को कल्पना नहीं थी कि मल्लयुद्ध दो-तीन प्रहर तक चलेगा। दोनों तरफ के आघात-प्रतिघात से रक्त रंजित दोनों पक्ष हो रहे थे। चाणूर इस प्रकार कृष्ण से युद्ध कर रहा था जैसे अजेय हो और देवताओं से वरदान प्राप्त हो। किन्तु अन्त में महापराक्रमी कृष्ण ने चाणूर को दोनों हाथों से आकाश में उठाकर जमीन में पटक दिया जिससे शाम ढलने से पूर्व चाणूर के प्राण

निकल गये। उधर वलभद्र ने मुष्टिक को परास्त कर मार डाला। कूट, शल और तोषल आदि मल्ल जो बदला लेने आये, सब युद्ध में मार डाले गए।

विजय के पश्चात कृष्ण ने कहा - "चाणूर वास्तव में महाबली योद्धा था। मैंने अनेक असुरों का संहार किया, किन्तु चाणूर के समान कोई वलशाली न था। संसार में जब भी मेरी विजय की बात होगी तो चाणूर को वरावर का वली माना जाएगा।"

मल्लों के परास्त होने पर कृष्ण कंस की ओर झपटे जो कृष्ण-वलभद्र को अपशब्द कह रहे थे और द्वंद्व-युद्ध को ललकार रहे थे। कृष्ण ने अति चमत्कारिक रूप से कंस को पकड़कर सभास्थल में ही उठाकर पटक-पटक कर मार दिया। सारे मथुरा, गोकुल, कोशल आदि में कृष्ण की इतनी बड़ी विजय पर उन्हें चमत्कारी पुरुष और ईश्वर का स्थान दिया गया।

4
महाबली चाणूर का लोक-कथानक

चाणूर का वृतान्त श्रीमद्भागवत की प्रसिद्ध कथा कृष्ण-कंस युद्ध एवं कृष्ण-चाणूर द्वंद्व-युद्ध से है। कंस ने कृष्ण को मारने के अनेक षड़यन्त्र किये, किन्तु सफल न हो सका। स्वयं कृष्ण का सामना करने से पहले कंस ने अपने सबसे शक्तिशाली योद्धा-पहलवान चाणूर को कृष्ण से लड़ने भेजा। यह भयानक युद्ध ढ़ाई दिन तक चलता रहा। कृष्ण को अनुभव हो गया कि चाणूर अजेय है इसे दांव-पेच से मारना असंभव है। इसलिए कृष्ण ने माया का सहारा लिया।

कृष्ण की छाया-मात्र चाणूर से युद्ध करती रही। कृष्ण ने मोहिनी रूप धारण किया और वे चाणूर की पत्नी के पास जाते हैं और चानो की शक्ति का रहस्य जानना चाहते हैं। कृष्ण पूछते हैं कि भाई कहां है?

कृष्ण के मोहिनी रूप को देखकर वह कहती है कि उसका कोई भाई नहीं है। आप बताइये के आप कौन है? कृष्ण बताते हैं कि बली चाणूर मेरे ज्येष्ठ भ्राता हैं। हम लोग एक बार अकाल पड़ने के कारण बिछुड़ गये थे। इस मायावी कथन से पत्नी विश्वास करके कहती है कि वे

कंस के अखाड़े में कुश्ती करने गये हैं। जब कृष्ण चाणूर को परास्त करने के विषय में पूछते है तो वह रहस्य को बतलाने से इन्कार करती है और कहती है कि रहस्य बतलाने से चाणूर परास्त हो जाएंगे और मैं विधवा हो जाऊंगी।

कृष्ण ने वचन दिया कि विधवा होने की स्थिति में मैं तुमसे शादी कर सकता हूँ। इस शर्त पर वह चानो की शक्ति बतला डालती है। वह बतलाती है कि जब तक आंगन में लगा पीपल का वृक्ष हरा रहेगा तब तक चाणूर को कोई नहीं मार सकता। इसके लिए आवश्यक है कि पीपल की जड़ों को उखाड़ दिया जाए और इसके तने को सुखा दिया जाए। तभी उसकी मृत्यु हो सकती है। मेरे पति की जड़ें पाताल में और चोटी अम्बर में हैं।

रहस्य जानकर कृष्ण ने पीपल की जड़ों में दीमक लगा दी। दीमकों ने पीपल की जड़ों को खोखला करना शुरू किया। इस रहस्य का पता लगने पर महाबली चानो (चाणूर) ने मुर्गों को पैदा कर दीमक को चट करने को भेजा। कृष्ण ने मुर्गों को मारने के लिए बिल्ली को भेजा। चानो ने बिल्ली को मारने के लिए उल्लू को भेजा। कृष्ण ने उल्लू को शाप दिया कि तुम दिन में नहीं देख सकोगे। इस प्रकार कृष्ण विजयी हो गये। इस वृतान्त के कारण चानो वलि के 'थान' पर मुर्गे की बली चढाई जाती है और मुर्गे उड़ाए जाते हैं।

अन्तकाल में चानो ने कृष्ण से अपने उद्धार की भीख मांगी। कृष्ण ने वरदान दिया कि तुम संसार में मेरे साथ युद्ध करने के कारण महाबली कहलाओगे। जब तक मेरा नाम दुनिया में रहेगा तब तक तुम्हें भी लोग महाबली सिद्ध के रूप में पूजेंगे। कृष्ण ने यह भी वरदान दिया कि तुम्हारे साथ सौ सन्यात, 12 जात, 96 करोड़ देवी-देवता, 84 सिद्ध, 64 जोगणें, 52 बीर, पंजप्यारे, 360 सिरकियां अंग-संग रहेंगे।

एक अन्य लोककथा के अनुसार चानो को हराने के पश्चात कृष्ण उसकी पत्नी लूणा के पास कोढ़ी का रूप धारण करके जाते हैं और चानो

की पराजय की सूचना देते हैं। कृष्ण पूर्व शर्त के अनुसार उससे शादी की बात करते हैं, परन्तु लूणा कृष्ण के कोढ़ी हो जाने पर शादी से इन्कार कर देती है। वह कहती है कि वह तो बहुत ही सुन्दर और कुशल व्यक्ति हैं। इस पर कृष्ण लूणा से पलभर आखें बन्द करने को कहते हैं। कुछ ही पलों में वह अपने असली त्रिलोकीनाथ रूप में आ जाते हैं। अब लूणा कृष्ण से शादी को तैयार हो जाती है। किन्तु अब कृष्ण शादी से इन्कार करते हैं और उसे मक्खी बन जाने का अभिशाप देते हैं। और वरदान देते हैं कि चानो की पूजा के साथ उसकी पूजा 'कून माट' के रूप में होगी।

चाणूर-कृष्ण युद्ध का वर्णन चाणूर से सम्बन्धित लोक-नाट्य 'धाज्जा' में प्रस्तुत गीत में ढोल-नगाड़ों के मध्य गीत के रूप में प्रस्तुत किया जाता है -

''जादे कृष्णे हस्ता ढ़हाई, टमकां जो बैणे बजाये,
पहली चोट टमके बाई, धरत कम्बे लोकी डराये,
दूजी चोट टमके बाई, मैहले बैठी राणी डराये,
तिज्जी चोट टमके बाई, महल्लां दे कुंगर ढ़लाये,
पंजी चोट टमके बाई, चूंसड़ धोबी मार गिराये,
छठी चोट टमके बाई, मारेया चैनू चर्मकार,
जुघ लग्गेया दूइ जाणेया, सके मामे सगे भाणजे,
खीरी चोट टमके बाई, कान्हे कंस मारेया घरे आई।''

चाणूर-कृष्ण युद्ध के नाट्य रूप 'धाज्जा' को हिमाचल के अधिकांश क्षेत्रों में गायन-रूप में प्रस्तुत किया जाता है। चम्बा क्षेत्र में इस युद्ध का रोचक वर्णन मिलता हैं -

''मथुरा मंज छिंज घुल्लदी,
आज्ञा को दीइएं माता
मामा री छिंजा जो जाणा जरुर !
अज दिइएं वो माता कल दीइएं
मूं तो छिंजड़ी घूलणी जरुर !

आज्ञा तां दित्ती ओ माता,
छिंजड़ी मंज घूल्दा चैनू,
न तो डेहन्दा चैनू, न तां डैहन्दा कान्हा
आज तो साडी सेली कान्हा,
कल छिंज घूल्णी जरुर।"

5
सिद्ध चानो अछूत जाति का देवता : एक लोक विश्वास

पौराणिक चाणूर पहलावान 'चानो' बन गया और उनकी पत्नी लूणा रानी बन गई है। लोक विश्वासों के अनुसार चाणूर क्षत्रिय जाति से सम्बन्ध रखता था और कंस के पहलवानों का मुखिया था। चाणूर राजा कुलाश का पुत्र था। ये चार भाई थे - बलिदानों, दहाम्नबली, चाण्डुल दानों और सिद्ध चानो। देवता का प्रमुख पुजारी नचार चानो की 'अरदास' (प्रार्थना) में इसका वर्णन करता है। कहते हैं जब कृष्ण ने मथुरा की तंग गलियों में कुबलयापीड़ हाथी को मारकर फेंक दिया तो उसे उठाने को कोई तैयार न हुआ। वह किसी से भी उठाया नहीं जा रहा था। तब चाणूर के भाइयों ने अछूत बन जाने के डर से हाथी को उठाने से इन्कार कर दिया। चाणूर ने भी उसे उठाने से असमर्थता प्रकट की। वह भी अछूत बनना नहीं चाहता था। उनके यह कहने पर कि दिन के चौथे पहर में जब वह इस क्रिया से निवृत हो जाएगा और गंगाजल और पंचगव्य से स्नान कर लेगा तब उसे अछूत नहीं माना जाएगा। इस बात का साक्षी केवल एक डूम देवता का पुजारी डूमणा था।

सिद्ध चानो ने बहादुरी से कुबलयापीड़ हाथी को उठाकर आकाश में उछाल दिया और दूर फेंक दिया, लेकिन जब वह स्नान से निवृत होकर आया तो उसके भाइयों ने उसे अपने साथ मिलाने से इन्कार कर दिया। डूमणा गवाह भी गवाही से मुकर गया। कहने लगा कि दिन के चौथे प्रहर

नहीं बल्कि चौथे युग कलियुग की बात की थी। चानो ने घर से निकलने से पहले डूमणे को शाप दिया कि 'तुझ पर अब कोई विश्वास नहीं करेगा, जो तेरा अन्न खाएगा उसे दरगाह में भी शरण नहीं मिलेगी। तेरी कमाई में बरकत नहीं होगी।'' बहुत कहने पर उसके भाइयों ने उसे चौथे युग में अपने साथ मिलाने का वचन दिया। मान्यता है कि जाति-पाति के बन्धन से मुक्ति आज इसीलिए संभव हुई है।

दुःखी चानो श्रीकृष्ण की शरण में गया। श्रीकृष्ण ने उसे वरदान दिया कि कलियुग में तुम संसार के सबसे बली सिद्ध माने जाओगे तथा तुम्हें इच्छित जीवन और मृत्यु देने का अधिकार रहेगा।

इसीलिए जनसाधारण की आस्था है कि इसी कारण चानो के लोक नाट्य धाज्जा एवं गाथा का सम्बन्ध 'रविदास समाज' से हो गया और 'चानो' मात्र चर्मकारों (चमार जाति) के देव बन गये। किन्तु वर्तमान समय में सभी जातियों के लोग इसके धार्मिक-अनुष्ठानों में श्रद्धापूर्वक भाग लेते हैं। चानो का भाई बानो था जिसके वंशज बोहरे (महाजन) आज भी इष्ट रूप में चानो की पूजा करते हैं। चमारड के प्रतीक रूप में आटे का 'कुन्नमाट', चिलडू (रोटी) बनाकर 'कशाव' घी मिलाकर चानो की पूजा-अर्चना करते हैं।

सिद्ध चानो निम्न जातियों का इष्ट रहा है। इसके पीछे ऐतिहासिक सामाजिक-व्यवस्था रही है। मध्यकाल में जातिवाद को अधिक प्रसार मिला, कारण विजातीय शासकों की धार्मिक कट्टरता थी। शासक और शासित में समाज में प्राचीन समय से विषमता रही है। इसके उदाहरण ईसा की प्रथम शती में शकों और कुषाणों के हमले और गंगा और सिंध के मैदानों में उनकी विजय तथा पराजित भारतीय क्षत्रिय जाति का उनका दास बन जाना, फिर दासों को गन्दे तथा सेवा-कृषि आदि के कार्य करवाना आदि से इस वर्ग का अस्पृश्य बन जाना निम्न वर्ग के उदय के सबल प्रमाण माने जा सकते हैं। मध्यकाल से पूर्व कठोर वर्णाश्रम तो था, किन्तु अस्पृश्यता का वर्तमान स्वरूप नहीं था। हां, निम्न वर्ग जो निम्न जाति बना (मनुस्मृति

काल) अस्पृश्यता का रूप बनकर सामने आया। यद्यपि विजयी शक-कुषाण भारतीय-सामाजिक व्यवस्था का अंग बने, किन्तु वे क्षत्रिय नहीं 'राजपूत' कहलाये जो वस्तुतः विदेशी मूल होने पर भी रोटी-बेटी के सम्बन्धों के कारण यहां का रक्त ही बन गए। ये पूर्ण-रूप से भारतीय सामाजिक-धार्मिक संरचना में खप गए। किन्तु विजयी होने का भाव आधुनिक राजपूत जाति में, जो विभिन्न वंश समूहों में व्यवस्थित है, आज भी पाया जाता है।

चाणूर 'सिद्ध' कहलाया, इसके पीछे लोक विश्वास है कि चाणूर कंस का सर्वप्रमुख शक्तिशाली योद्धा-पहलवान था, जिसने देवताओं से तप द्वारा शक्ति प्राप्त की थी अतः उसे सिद्ध कहा गया। कहा जाता है कि उसने लम्बे समय ढ़ाई दिन तक कृष्ण से युद्ध किया था।

वैसे चानो की पूजा व्यक्तिगत तौर पर रविदासी समाज में घर-घर की जाती है, किनतु देवता की पूजा का प्रमुख उत्सव 'धाज्जा' नाट्य सामूहिक धार्मिक-अनुष्ठान है। धाज्जा नाट्य पूर्णतयाः धार्मिक आचार हे, जो मनौती के रूप में आस्थावान लोक अपने घर आयोजित करवाते हैं। यूं तो हिमाचल के अन्य लोकनाट्यों करयाला, स्वांग, बांठड़ा, भगत, बरलाज, हरण, होरिङ्फो आदि में धार्मिकता का आधार रहता है, किन्तु धाज्जा नाट्योत्सव पूर्णतः धार्मिक उत्सव है। धार्मिक-आचार के पश्चात मनोरंजन के लिए हास्य नाटिकाएं (स्कीट्स) भी प्रस्तुत की जाती हैं जिससे आस्था के साथ मनोरंजन भी होता रहता है। धाज्जा हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर, सोलन, मण्डी, कांगड़ा, चम्बा, ऊना आदि ज़िलों में प्रमुख रूप से प्रचलित है।

6
सिद्ध चानो – "गड्ढ़ा देवता" के रूप में स्थापना

सिद्ध चानो की स्थापना "गड्ढ़ा देवता" के रूप में की जाती है। जहाँ सिद्ध चानो स्थापित करना हो, वहाँ करीब एक फुट गढ़ा गहरा तथा वर्गाकार बनाया जाता है। इस गड्डे के अन्दर एक बकरे की बलि देने के पश्चात बकरे का सिर, पैर, मुख्य आन्त, पूंछ तथा खून मन्त्रोचारण के साथ विशेष प्रकार से दबाया जाता है। सोलन क्षेत्र में बकरे, मुर्गे की बलियां दी जाती है जबकि मण्डी क्षेत्र में भेडू की बलि दी जाती है। बकरे या भेडू की बलि देवता की विशेष स्वीकारोक्ति के पश्चात ही दी जाती है। यदि बकरा या भेडू नचार द्वारा (धाज्जा का नायक पुजारी) अभिमंत्रित जल उसके सिर पर फेंकने से 'बीनता' (सिर कंपकपाकर हिलाना) नहीं तो उसकी बलि नहीं दी जा सकती। फिर किसी दूसरे बकरे की बलि दी जा सकती है।

गड्ढ़े के भीतर भेडू का सिर ऊपर की ओर हो और टांगे, पैर आदि सब कुछ दबाकर चूहों द्वारा निकाली गई मिट्टी (मशकेर) अथवा वाम्बी की मिट्टी से दबाया जाता है।

इस प्रक्रिया में नचार अपने दो चेलों के साथ स्थापना के अवसर पर तीन रोट, सूखे मेवों को मिलाकर गड्ढ़े को समर्पित करता है। धूप,

दीप नैवेद्य और अन्य दान-दक्षिण हेतु अनाज अथवा रूपये भी दान के लिए रखता है। सात प्रकार का अनाज 'सतनज्जा' बनाता है। गूगल धूप जलाकर इन सामग्रियों के साथ नचार मंत्र पढ़ता है -

'आद-आद की जुगाद
जुगाद के कुश,
कुश के वीर,
वीर के मण्डल, मण्डल के छैल देओ,
कैलाश का बेटा सिद्ध चानो,
सिद्ध चानो बली दानो
आसमान चोटी, पताल जड़ा
जे थी सौरे तेथी खड़ा।"

इस प्रक्रिया से पहले नचार जिस घर में गड्ढ़े की स्थापना करनी हो, उस परिवार के सदस्यों को कच्चे धागे की 'कार' बांधता है। यह स्थान जहां छप्पर का पानी गिरता हो, उसके आगे-सामने रखा जाता है। इस समय बलि दिए जाने वाले बकरे या भेड़ू और मुर्गे को सभी सदस्यों से स्पर्श करवाकर बांध दिया जाता है। 'कार' घर के चारों ओर दी जाती है। मुख्य चेला यह मंत्र पढ़ता है -

"चांदी का जोड़ा, चांदी का घोड़ा
राणी लूणा,
जेबे ओपरा-सोपरा हो
दे गवाई, तो लूणा राणी की दुहाई।"

मंत्रोच्चारण के बीच गड्ढ़े को बन्द किया जाता है। गड्ढे के ऊपर एक शिला या स्लेट रखा जाता है जो प्रायः गड्ढ़े देवता का प्रतीक माना जाता है। उसके ऊपर जलता दीपक रखा जाता है लेकिन दीपक एक अन्य आनुष्ठानिक-प्रक्रिया 'नालधार' के पश्चात ही रखा जाता है।

गड्ढ़े के ऊपर रखी शिला ही गड्ढ़े देवता की प्रतीक होती है। शिला रखने से पूर्व गड्ढे से दूर किसी स्थान पर जहां कोई जलाशय हो,

वहाँ मंत्रों के साथ मुर्गी की बलि देकर उस स्थान पर भूनकर या पकाकर देवता के तीन चेले गड्ढ़े से निकली कुछ मिट्टी जल में प्रवाहित करके मांस खा जाते हैं। कुछ दूर-दूर फेंक देते हैं।

इसे जल देवता अर्थात ख्वाजा पीर की पूजा माना जाता है। ख्वाजा पीर की पूजा में ऊँची आवाज में मुख्य चेला मंत्र पढ़ता हैं-

'गंगा जल, पाप कटे हरिद्वार,
जय गंगा माई, तेरी दुहाई,
ए नालधार, दे पुजाई।" आदि आदि।

ख्वाजा पूजा के पश्चात स्थापना स्थल पर आकर चेले शिला पर आकर दीप जलाते हैं। एक चरण-पादुका भी साथ रखी जाती है। चेला एक बड़ी केतली में जल भरकर स्थापना स्थल से पानी की धारा छोड़ता मनौती करने वाले परिवारजनों के साथ पूरे घर में स्थापना करता है। पानी की "कार" देते समय नचार मंत्र पढ़ता है -

"चानो बलीया साठ जमाती
नीला घोड़ा मगना हाथी
भैरो जता भैरा पुहाल पिढ बानी
कजु काल या हां काली के चेले
इस भगवान की बरताई
ओपरी-सोपारी--भुवरी दे गुवाई,
मेरा कंचुआ मसाण
सिद्ध चानो का लाडला मोहरे धसगा,
जाई नारी खेले नार सिंह देवता
मकड़ा खेले मसाण, रियाऊंड़ी नारी,
खिचे खोपरा मसाण आये गुरु मेरा
आपू लिखे आपू सीखे
आपू पढ़े रघुनाथ का चेला
मसए देस का सिक्की

देखो देवी कालका
अपणे जंतर मंतर का तमासा
सिर नेवे देवी कालका
पैर का खींचे बालका
हिन्दू देहरा मुसलमान का मक्का
तुझे लगे बाबा बली तेरी ही धक्का
देवी के चौके दूध रखा जठा
काली लटा वाली कालिका काली
जो न माने उसकी कर एक ही ब्याली
मेरा बचन न जाये खाली
जै काली कलकते वाली
जै बाबा सिद्ध चानो की।''

गड्ढ़ा देवता की पूजा प्रायः धाज्जा-अनुष्ठान के समय ही की जाती है। इसे मनौती पूर्ण होने अथवा मनोकामना के लिए उत्सव के तौर पर मनाया जाता है।

यदि पुराने गुड्ढे की पुनः स्थापना करनी हो तो पुराने गड्ढे की मिट्टी इस प्रकार निकाली जाती है कि उसका प्रत्येक अंश गड्ढे के पास रखा जाए। बकरे-भेडू आदि के सिर, पैर, आन्त आदि गड्ढे में पुनः पुनर्स्थापित करके इस पुरानी मिट्टी को जिसे पवित्र 'सन्यात' कहा जाता है गड्ढे में व्यवस्थित रूप से दबा दिया जाता है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि 'सन्यात' के बाहर बिखरने से 'खोट' लगता है।

पुराने गड्ढे वाले स्थान पर प्रायः चार वर्ष बाद ही 'धाज्जा' का आयोजन होता है। एक साल से पूर्व तो बिल्कुल भी नहीं। ऐसा इसलिए होता है कि गड्ढे में बकरे-भेडू की अस्थियां चार साल के बाद ही गलती है।

स्थापना-स्थल को लाँघकर कोई नहीं जा सकता। गड्ढा देवता की पूजा 'कुन्नमाट' के बिना अधूरी समझी जाती है। इस समुदाय का विचार है कि 'कुन्नभाट' चानो की पत्नी (लूणा) की आस्था का प्रतीक देवस्थान है।

"''कुन्नमाट' का 'चमारड़' वह स्थान होता है जहां पर चमड़ा रंगाई का कार्य किया जाता है। यदि किसी बस्ती में गड्ढा देवता न हो तो 'कुन्नमाट' (चमारड़) की पूजा करके ही धाज्जा धार्मिक अनुष्ठान किया जाता है। यह स्थान आम रास्ते के साथ होता है जहां से प्रत्येक दिन कम से कम 52, 84, 96 प्राणियों का आवागमन होता हो। गड्ढे देवता पर स्त्रियां पूजा अर्चना नहीं करतीं। इस देवता को तेल अथवा घी का ही धूप चढ़ाया जाता है।"

7
तांत्रिक अनुष्ठान - 'नालधार' का विधान

धाज्जा उत्सव के दिन मनौती-कर्ता के घर चारों ओर नचार 'कार' लगाता है जिसके चारों ओर विधान के अनुसार जल-पंचगव्य आदि परिक्रमा करके छिड़का जाता है। इसके अतिरिक्त मनौतीकर्ता की जमीन की सुरक्षा तथा खोट-दोष और बुरी शक्तियों से छुटकारे के लिए 'नालधार' का अनुष्ठान किया जाता है। आयोजन के देवस्थान पर बकरे की बलि चढाई जाती है। बकरे का सिर, टांगें (खुरिया-मुरिया) पूंछ, कलेजा, मुख्य आंत, तथा खून से भरा बर्तन 'थान' के पास दबाने से पूर्व रखे जाते हैं।

बकरे के खून को लेकर वधकर्ता अपने दायें हाथ के पंजे को खून में भिगोकर आयोजनकर्ता के घर के सभी दरवाजों के ऊपर तीन-तीन जगह पंजे की छाप अंकित कर देता है। इसे शुभ माना जाता है और घर में किसी तांत्रिक जादू-टोने के फलने का भय नहीं रहता। संध्या प्रकार के समय गड्ढा देवता का अनुष्ठान शुरू होता है। नचार पांच कारखानियों (चर्मकार जो चमड़ा रंगते हैं) को आमन्त्रित करता है। इस प्रकार एक भक्त, पांच कारखानिये, आयोजनकर्ता कुल सात या नौ व्यक्ति इस अनुष्ठान में भाग लेते हैं। सभी लोग अस्थाई थान से गड्ढा देवता की ओर प्रस्थान करते हैं। देवस्थान के पास पहुंचकर 'मेहर बाबा' का जय घोष कर

गड्ढा की शिला उखाड़ता है। सन्यात के टोकरी में रखा जाता है। छह लोग आयोजन कार्ता के घर तथा उसकी जमीन की सीमाओं (आयोजनकर्ता की इच्छानुसार) के चारों ओर चक्कर लगाकर आते हैं। इसे 'फेरी' कहा जाता है। फेरी के दौरान मुख्य भक्त जोर-जोर से गाता तथा तबला बजाता रहता है। इसे फेरी का गीत कहा जाता है। इस फेरी के आगे कोई नहीं आता, अन्यथा देवता की चपेट में आने का भय रहता है।

खून का वर्तन लिए हुए एक व्यक्ति समस्त फेरी के मार्ग में खून की बून्द-बून्द टपकाता रहता है, इसे 'धार' कहते हैं। आन्त लिए एक व्यक्ति समस्त मार्ग में आन्त को धरती से स्पर्श करके चलता हैं, इसे 'नाल' कहते हैं। विशेष रूप की इस प्रक्रिया को 'नालधार' कहते हैं। पंचामृत के घोल की धारा फेरी के मार्ग में बहती रहती है। इसे ठण्डी नालधार कहते हैं। मान्यता है कि रैदासी समाज का यह धार्मिक अनुष्ठान स्वर्ण जातियों के लिए निषिद्ध है। फेरी गड्ढा देवता के पास आकर समाप्त होती है। तत्पश्चात बकरे का सिर, पैर, पूंछ, आन्त, फेरी के दौरान बचा खून, पंचामृत, एक दो रुपये, चूरी इत्यादि गड्ढे में दबाये जाते हैं। सिर को दबाते समय मुंह को ऐसी दिशा की ओर किया जाता है, जहाँ सामने कोई घर न हो। इसके बाद सारी सन्यात को गड्ढे में डाल दिया जाता है। आटे का चौमुखा जलता हुआ दीया रखकर ऊपर से गड्ढे की शिला रख दी जाती है। गड्ढे की अच्छी तरह लिपाई, पुताई करके देवस्थान पर लाल रंग का ध्वज गाड़ दिया जाता है।"

इसके पश्चात सभी श्रद्धालु भेंट, प्रसाद आदि चढाते हैं। अन्त में मुख्य भक्त के द्वारा लम्बी अरदास (पूजा अर्चना) के साथ नालधार का विधि-विधान समाप्त होता है। इसके बाद भोज का आयोजन किया जाता है।

परम्परा में गड्ढा देवता के दो रूप उपलब्ध होते हैं - महाबलि बाबा चानो का गड्ढा, और सात महाबलियों का गड्ढा/सिद्ध चानो के गड्ढे पर बकरे या भेडू की बलि चढाई जाती है जबकि सात बलियों के गड्ढे पर भैंसा, मुर्गा, सूअर, केंकड़ा, मछली तथा मेढ़ा इत्यादि सात प्राणियों

की बलि दी जाती है। सात बलियों का अनुष्ठान मंहगा होने के कारण यह बहुत कम आयोजित होता है।

गड्ढा देवता बलि प्रेमी है। हिमाचल के अन्य लोक-देवताओं की तरह स्थान विशेष के अनुसार चानो के बलियां दी जाती हैं। धाज्जा आयोजन में चानो को अतिरिक्त काली, हनुमान, भैरों, पंजपीरों आदि की पूजा भी की जाती है। कृष्ण के भजन तो धाज्जा की जान होते हैं। पूजा-परम्परा में स्थान विशेष के अनुसार नये भजन-स्तुतियां मिलती रहीं हैं।

8
"धाज्जा" लोक-नाट्य के रूप में

धाज्जा-आयोजन का मूल रूप धार्मिक-आस्था से है, किन्तु कालान्तर में इसमें अन्य लोक-नाट्यों करियाला, बांढड़ा, स्वांग आदि की तरह दर्शकों के मंनोरंजन के लिए हल्के-फुल्के गीत, स्वांग आदि जुड़ते गए हैं। यह आयोजन सांयकाल के पश्चात प्रारंभ होकर सुबह तक चलता है, अतः दर्शकों को कार्यक्रम में बांधने के लिए मनोरंजन की आवश्यकता पड़ी। धाज्जा की मूल कथा कृष्ण-चाणूर युद्ध से जुड़ी है, अतः इस कथा का काव्यमय गायन इसे रोचक बना देता है।

धाज्जा-नाट्य को प्रारंभ करने के लिए मन्नत करने वाले भक्त के घर के सामने खुले मैदान (खेत) में अखाड़े का आयोजन होता है। "अखाड़ा" पहाड़ी-भाषा में प्राचीन 'रंगभूमि' को कहा जाता है। प्राचीन काल में राजा-महाराजा योद्धाओं एवं पहलवानों के द्वंद्व युद्ध रंगभूमि में करवाते थे। स्वयंवरों के अनेक उदाहरण, रामायण, महाभारत और पुराणों में वर्णित मिलते हैं। कृष्ण और चाणूर का मल्लयुद्ध कपट पर आधारित था, फिर भी कंस ने एक भव्य-रंगभूमि (अखाड़ा) का निर्माण करवाया था, जहां से उसके सम्भ्रान्त नागरिक इसका आनन्द ले सके। वह स्वयं भी एक ऊँचे मंच पर विराजमान था।

धाज्जा का प्रमुख-स्थल अखाड़ा ही है जहां एक बड़ा अलाव 'घ्याना' जलाया जाता है जिसके चारों ओर नाट्य के कलाकार (भगत) नचार (प्रमुख भगत) रात भर घूमते-गाते-बजाते विभिन्न प्रस्तुतियां प्रदान करते हैं। घ्याने में पवित्र लकड़ियां जलाई जाती हैं। इसकी अग्नि एवं राख को पवित्र माना जाता है। धार्मिक-भावना की प्रधानता होने के कारण दर्शकों की संख्या कम रहती है।

प्रदर्शन-स्थल पर बीच में त्रिशूल, सांकल आदि गाड़ दी जाती हैं। थान के पास लूणा रानी (चानो की पत्नी) हेतु आस्था स्वरूप सूप, चारु पल्यार (मोची के औजार) काली की तस्वीर, बाबा बलि का फोटो, मोर पंख, धोती, दीपक, नारियल, कंद, चावल, मक्की, माश की दाल का ढेर रख दिया जाता है। नचार का आसन यही होता है जो धूणे (घ्याने) में समय-समय पर रात्रि को तेल-घी का धूप डालता रहता है। नचार वास्तव में नाट्य का प्रमुख कलाकार भी होता है जो धार्मिक आचारों के साथ बीच-बीच में व्यंग्यात्मक टिप्पणियां भी करता रहता है। नचार इस मांगलिक आयोजन का पारिश्रमिक नहीं लेते, इसके लिए उनका अपनी यजमानचारी में साल का 'स्याथा', 'साजीबाई', 'सूई-मूई' (स्याथा फसल पर दाने, साजाबाई संक्रांति पर तथा त्यौहारों पर रोटी और उपहार, सूई-मूई जन्म-मरण पर इनका 'लाग') बंधा होता है। अखाड़े का बाबे को पवित्र-स्थान माना जाता है।

वस्तुतः अखाड़ा पुराणकालीन कृष्ण चाणूर की रंगभूमि का स्मरण करवाता है। मल्लयुद्ध के स्थान पर विभिन्न धार्मिक नाट्य प्रस्तुतियां एवं मंनोरंजात्मक-प्रस्तुतियां 'धाज्जा' को सजीव बनाती हैं।

घ्याना के चारों ओर घूमते कलाकार स्वांगों का मंचन करते हैं। अग्नि-नृत्य में 'बौरा' नाम का पात्र घ्याने से आग का भक्षण करता है। जनश्रुति है कि बौरा घ्याने से सवा मन अग्नि भक्षण करता था।

अखाड़े में नाट्य प्रस्तुति से पूर्व एक मशाल प्रज्चलित की जाती है जो नाट्य की समाप्ति तक जलती रहती है। प्राचीन काल में मंच पर प्रकाश

की व्यवस्था के लिए इसे आवश्यक रूप से जलाया जाता था। आज भी यह परम्परा वर्तमान है। आयोजनकर्ता के घर का कोई सदस्य इसमें रातभर समय-समय पर सरसों का तेल डालता रहता है। इसका बुझना अशुभ माना जाता है। बुझने पर बकरे की बलि आवश्यक है। यह मशाल विशेष चिकनी मिट्टी तथा कपड़े से तैयार की जाती है। मशाल को प्रातःकाल हनुमान, भैरों के स्वांग के पश्चात गड्ढे देवता पर रोट चढ़ाकर सभी कलाकार इसे ध्याने में समर्पित करते हैं।

9
नाट्य का प्रारम्भ मंगलाचरण से

नचार द्वारा धार्मिक आचारों के पश्चात अखाड़े में बजन्तरी पहुंचते हैं, ये संख्या में दस से पन्द्रह तक हो सकते हैं। प्राचीन वाद्य यन्त्र नगाड़ा, डौंरु, खड़तालें, थाली, कांसिये, हरमोनियम, ढोलकी, नाद, तबला आदि स्थान विशेष के अनुसार सारे प्रदेश में प्रयुक्त होते हैं। इनमें ढोलकी और बारहसींगे के सींग से बने नाद को अति पवित्र माना जाता है। यह अखाड़े में सर्वप्रथम बजाया जाता है तथा धरती पर नहीं रखा जाता। ढोल-नगाड़ें की आवाज एवं शहनाई की धुन पर नृत्य का ऊँचा उद्घोष होता है। इस देव-संगीत को पूरे गांव या क्षेत्र में सुना जा सकता है।

धाज्जा नाट्य के लिए संगीतमय वातावरण बनाया जाता है। दस-पन्द्रह बजन्तरी आधे घण्टे तक शहनाई और ढोल-नगाड़े की धुन पर चन्द्रौली (चन्द्रावली) का नृत्य चलाते हैं। कार्यक्रम रात्रि को देर से लगभग दस बजे शुरु होता है। इसका कारण लोग दूर-दूर से भोजन आदि से निवृत होकर अखाड़े की तरफ चलते हैं। चन्द्रौली राधा की सखी चन्द्रावली थी जो कृष्ण से प्रेम करती थी जो भक्तिभाव से कृष्ण के प्रति समर्पित थी, किन्तु कृष्ण से विवाह नहीं कर सकी। राधा उससे जलती थी। यह

कृष्ण-गोपियों का स्वांग पुरुष कलाकार मुख्य नायक कृष्ण का वेश धारण कर बांसुरी लिए अन्य पुरुष कलाकार गोपियों के वेश में सजकर नृत्य के साथ देर तक चलता है। ये संख्या में तीन होते हैं। इस नृत्य में नारद के वेश में नाद, डण्डा, डोरी, लम्बी सफेद दाड़ी, धोती और जनेऊ पहने कलाकार मंच पर आता है। नारद और सखी घुंघरु बांधे होते हैं।

इन तीन पात्रों की सर्वप्रथम आरती उतारी जाती है एवं आरती गाई जाती है - बिलासपुर क्षेत्र में नाट्य का प्रारम्भ गणेश की आरती से किया जाता है -

"जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा
मइया जाकी पारबती पिता महादेवा !
पान चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा
लड्डुवन का भोग लगे संतन करे सेवा ....."

सोलन क्षेत्र में देवियों की स्तुति के रूप में आरती गाई जाती है -

जै हो ज्वाला मैया तेरी जोत जगा दी
जै हो दुर्गा मैया तेरी जोत जगा दी
जै हो काली मैया तेरी जोत जगा दी
जै हो वैष्णो देवी तेरी जोत जगा दी
जै हो नैना देवी तेरी जोत जगा दी
जै हो चिन्ता मैया तेरी जोत जगा दी
जै हो भीमा काली तेरी जोत जगा दी

आरती समाप्त होते ही मंच पर जटाधारी, लम्बाटोप, गले में माला, धोती पहने लम्बी सफेद दाडी वाला आकर्षक नारद प्रवेश करके विभिन्न मुद्राओं द्वारा दर्शकों में कुतूहल जगाता है। वह व्यंग्यपूर्ण नृत्य कर मसखरी करता कंस वध की सूचना देता है। गायक-वादक गाकर गोपियों के आगमन की सूचना देते हैं -

"नारद मुनि आयो भई नारद मुनि आयो रे
नारद आयो रे ब्रह्म नारद आयो रे ...."

इस स्वांग में कृष्ण-अवतार का व्याख्यान किया जाता है। अखाड़े में अब नारद के पीछे श्रीकृष्ण और गोपियां प्रवेश करती हैं। कृष्ण सुन्दर सज्जा में मुख पर पाउडर, अब्रक की चमक, होंठ लाल गुलाब की भान्ति और मस्तिष्क पर सिन्दूर का टीका होता है। यह पात्र 12-16 वर्ष तक की आयु का होता है। गोपियां रास नृत्य करती हैं। इन पात्रों के साथ एक अन्य पात्र ऊधौ (उद्धव) कृष्ण सखा भी मंच पर आता है। गीत गाया जाता है -

"लाल बंसरी वालेया
सिर मोर मुकुट रंग कालेया
तेरी मुरली ने मन मेरा मोह लिया
सुन नंद के लाला रे।"

एवं

"चल सुनहरी बाऊगरिए दवारीया रे ओले-ओले
चुल्या मुइये बाऊगरी ये।
पापिये लोके पाप कमाया, सोने री बेले चरखा दलाया
पापिये लोहारे पाप कमाया, चीका रा भीत द्वारीया लाया।"

वादक आगे गाते हैं -

"क्या प्यारा नी सखी ये दरबार
हम सब मिल जाये बलहार।
गड़-गड़ बादल आयो
रिमझिम मेघ बरसायो
क्या प्यारा नी अज्ज का दिन बार
मैं भल नच रही बड़ी मजेदार।"

नारद के प्रवेश के स्वागत में बिलासपुर क्षेत्र में यह भजन गाया जाता है -

"नारद मुनि जी आये ब्रह्मा जी
नारद मुनि आये ब्रह्मा जी,

केड़िया पुरिया आईगे ब्रह्मा जी
केड़िया पुरिया जो चली जाणा
दरगाह पुरिया ते आईगे जी
सात लोकां जो जाणा जी
दरगाह पुरिया ते आईगे जी
दुनिया जो ज्ञान बताणा जी
बड़े प्यार से मिलणा सबने
दुनिया रे इन्सान रे।
न जाणे किस वेश में बाबा
मिल जाये भगवान रे।
हम है तेरा बाग बागीचा
तू बागा रा माली रे
अमृत जल से सबको सींचा
क्या जीमीं क्या असमाण रे
न जाणे किस वेश में बाबा
मिल जाये भगवान रे।"

नारद के लिए कई गीत गाये जाते हैं। फिर बजन्तरियों में से कोई एक व्यक्ति या मुख्य भगत नारद से चर्चा करता है जो शुद्ध रूप से मजाकिया और दर्शकों का मनोरंजन करने वाली होती है। इसमें नारद एवं विदूषक की तरह व्यंग्य की टिप्पणियां करता है। संगीत चलता रहता है -

भगत :- अरे महाराज तुम्हारा क्या नाम है?
नारद :- नवां या पुराणा?
भगत :- नहीं महाराज, सच-सच अपना नाम बताओ।
नारद :- तो सुण मेरा नाओं
"ककड़ सींणी बाया बडींगी
तुम्बड़ीया रा बीऊ लगाया

चुप जाणा एथा पोरे चलीजाणा,
नहीं तो मां जुत्या-जुत्या की टपकाणा।"

भगत :- अरे महाराज, आप इस नगरी में आये हैं। कुछ खाणा-पीणा कर लो।

नारद :- खाणा बाद में करुंगा, पहले ठेका दस्स, मैं पहले पीणा करना।

भगत :- सुणो महाराज, मैं आपके लिए क्या खाणा लेकर आऊँ?

नारद :- नहीं, कुछ नहीं खाणा, कऊंकि मूल रोग मूली, पाव रोग भटठा, आधा रोग काकड़ी, सारा रोग खट्टा।

भगत :- तो महाराज आप क्या लूण खाएंगे?

नारद :- आ भाई, मैं तो सरकारा रा पच्चीया हाजरा रा लोण खाईता, थोड़ा तुस्सां रा भी खाई लऊँगा

इस प्रकार स्थानीय बोलियों में नारद गोपियों पर भी व्यंग्य करता रहता है। ये चुटीले व्यग्य 2 घण्टे तक चलते रहते हैं। वातावरण संगीतमय और उल्लासपूर्ण बन जाता है। नारद अन्त में ज्ञान-ध्यान का स्वांग करते हुए व्यंग्य वाक्य कहते आयोजन कर्ता को आशीर्वाद देता है -

"अन्न दाता सर्व सुखी
अन्न खा के भूख मुकी
जय माता अन्नपूर्णा, खाई पी के दुज्जे रेगे तुरणा
अन्न देवा, तेरी सेवा

झूठ गलाई के मिलो मेवा
जो करो म्हारी निंदा, तेसरीया फूखो घरो रीया खिन्दा
जो करो म्हारी चुगली-चाड़ी तेसरी नठो घरो री लाड़ी
जो करो म्हारी उल्टी चर्चा, तेसखे मिलो वैकुण्ठो रा पर्चा
जो करो म्हारा जाप, तेसरे कटो कोटि-कोटि पाप।"

नारद, कृष्ण और गोपियों का यह स्वांग धाज्जा का प्रमुख स्वांग है। भजन-स्तुतियों, आरती और व्यंग्य-वाणों से रात्रि के प्रथम प्रहर में यह दर्शकों को बांधे रखता है।

10
बौरा का स्वांग

चन्द्रौली, नारद, कृष्ण-गोपियों के स्वांग के पश्चात अखाड़े में 'बौरा' नामक चमत्कारिक पात्र प्रकट होता है। इसे स्थानीय बोली में 'बौरे का स्वांग' कहा जाता है। बौरे को अलग-अलग ज़िलों में बावला, बाऊरा, बौरा आदि नामों से पुकारा जाता है। बौरा शरीर पर केवल लंगोट पहने होता है। उसके शरीर में काले-काले धब्बे तथा सिर पर आग का कटोरा होता है। यह स्वांग बहुत डरावना होता है।

Swang Performance

बौरा अंगारे खाता हुआ चिंगारियों को मुंह से निकालता है। यह हाथों और सिर पर आग का कटोरा रखकर अलाव के चारों ओर खेल खेलता चलता है। यह अजीब ढंग से नृत्य करता और उछलता कूदता है। जिन लोगों को खोट-दोष या 'ओपरा' की कसर होती है, वे अखाड़े में बैठ जाते हैं। वह इन बीमारों के सिर पर हाथ रखता है। विश्वास किया जाता है कि इस प्रकार उन्हें आधि-व्याधियों से मुक्ति मिलेगी। स्वांग में बौरा मंत्र भी बोलता है -

"बौरा रे बौरा साईं दा
आग खावे बौरा
जवान बंदी जावे

कुकड़ा दी जोड़ी तेरे नाल चर्लें दी
किस दे बौरे किस दे लाल।
आखीं काजल कारिया,
माथे बिंदला लाल।"

मण्डी क्षेत्र में बौरे का यह मंत्र प्रचलित मिलता है -

"कच्चा खाऊं - गीला खाऊं
चरपटा मेरे गुरु का नांव
जल बान्हू, थल बान्हू
डायणा बान्हू, डंकणा बान्हू
डायणा के मंत्र भी बान्हू
भूत-पिशाच बी बान्हू
विद्या पनी पनी कमलाघाट
जा रही कश्मीर, आगे घूटे सिद्ध चानो
पीछे घूटे अग्न बाण। रछया करो गुगा छत्री छवाण
आये गुरु मेरा। आपू लिखे, आपू सिखे,
मरु देश का सिक्का, बारा साला तपस्या किती
देवी के सिर का झाडू-जीभ का चौका।"

बौरा के स्वांग को नागबलि का स्वांग भी कहते हैं। बाबा बलि के सात रूप बताये गये हैं - बाबा बलि, लाल बली, रुला बली, नागा बली, हस्तबली, किलक बली तथा चपड़े बली। इन सातों बलियों पर धाज्जा में स्वांग का विधान है किन्तु समय की कमी के कारण यह नहीं दिखाया जाता। यह एक प्रकार का तांत्रिक-विधान माना जा सकता है।

सोलन क्षेत्र में बौरे के स्वांग में बौरा इस प्रकार अरदास करता है-

"गुर गुरी मन्याद भी तू, प्याल भी तू
लोक तू कदम तू, इक साईं
साह सी भाई प्यारे खुदा
पड़द-कितियां बात, घरो गई बला

आद दे जुगाद, जुगाद के मण्डल
मण्डल के राजा कैलास, राजे कैलास का बेटा
सिद्ध चानो।
जिस दी पताल जड़ां आकाश चोटी,
नीले घोड़े का स्वार,
ते सिर पे सोने दा छत्तर!"

स्वांग के आयोजन में आयोजन कर्ता एवं दर्शक रुपये दान देते रहते हैं। बौरा अन्त में आयोजनकर्ता को सुख-समृद्धि के लिए अरदास करता है -

बाबा बली मरदान, तू गढ़ मथरा दा पहलवान, सिद्ध चानो
बली दानो, महादानी नमस्कार है तेरे नाम को।
बाबा बली मरदान, तू जागदा जवान
सत रेती का थान, भक्त बारु का नाम
मटौरा का थान, भाई मसूर का थान
लाहौर, मटौर, रेतिया, बरेतिया रे थाना ते बौड़ना,
मेहर की नजर करनी, अपना प्रकाश करना, शत्रु का नाश करना
मेरी फरयाद तेरे पास, तेरी फरयाद सच्ची दरगाह बीच ....
नजर भरी के देखणा, कान भरी के सुणना
समैले के थान, डांगड़े के थान, चूरनी के थान
दिल्ली खेड़ा के थान, रेती के थान, छपल छड़ी के थान
से नजर भर के देखणा। शत्रु का नाश करना।
मैं मूलनहार तू वक्शणहार,
करवाण तेरे नांवो खे मेहर बाबे की।"

इसके साथ बौरे का स्वांग समाप्त होता है।

11

हस्तबली पर चाणूर की शोभा झलकी एवं ताज पहनाना

भागवत पुराण के अनुसार मथुरा की गली में जब कृष्ण ने कुवलपापीड़ नामक विशाल हाथी को मारकर फेंक दिया था तब चाणूर के अतिरिक्त कोई अन्य पहलवान उसे उठाकर दूर नहीं फेंक सका था। यह कार्य चाणूर ने आसानी से कर दिखाया था। चाणूर हाथी से भी अधिक बल रखता था, इस जनसाधारण की भावना ने हाथी के ऊपर विराजमान चाणूर को मुकुट (ताज) पहनाकर एक प्रकार से उसे राजा घोषित करने का स्वांग रचाया। संभवतः चाणूर को 'ताज' पहनाने के कारण ही इस नाट्य को 'धाज्जा का नाम दिया गया। वैसे भी सिद्ध चानों की सवारी हाथी ही मानी जाती है।

हस्तबली के स्वांग में अधिक समय और तैयारी की जरूरत होती है। इस स्वांग की तैयारी प्रसाधन कक्ष में न होकर खुले स्थान में करनी पड़ती है। इसके लिए सामान भी अधिक लगता है तथा खर्च भी बहुत होता है अतः आम भक्त इसका आयोजन नहीं करवाते। हस्तबली का स्वांग धाज्जा नाट्य की सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुति मानी जाती है।

हस्तबली के स्वांग के लिए चार चारपाइयां, उसके लिए सोलह कम्बलों की आवश्यकता होती है। बारह व्यक्तियों को चारपाइयों के साथ खड़े कर एक विशाल हाथी की आकृति बनाई जाती है। हाथी के ऊपर चानों को सुन्दर मुकुट पहनाया जाता है जिससे वह राजा की तरह दिखे। चानो को लाल वस्त्र, कानों में कुण्डल, हाथ में खड़ग आदि से भव्य रूप प्रदान किया जाता है। हस्तबली को अखाड़े में धीरे-धीरे घूमाते हैं और किसी विशेष कदम पर ये बारह व्यक्ति जोर से चिंघाड़ते (चिल्लाते) हैं, जिससे वातावरण स्तब्ध हो जाता है। चारों ओर सन्नाटा छा जाता है। इस प्रदर्शन को श्रद्धालु दर्शक खड़े होकर देखते हैं तथा हाथ जोड़कर पूरे समय तक खड़े रहते हैं।

इस प्रदर्शन में नचार जादू-टोने से पीड़ित व्यक्तियों को जंतर, ''धूंड़ी'' (भस्म) आदि भी देता रहता है। हस्तबली के लिए सवा मण चूरमा (रोटी-घी-शक्कर) बनाकर बड़े बर्तन में रखकर चढ़ाया जाता है और बाद में उपस्थित दर्शकों को बांटा जाता है।

हस्तबली को घुमाते घुमाते गीत-संगीत चलता रहता है। बिलासपुर मण्डी-ऊना क्षेत्र में यह गीत प्रचलित है -

''बली नांव तेरा खदवाये लाइए बी न
मेरा शृंगार साईं मेरे पे पइये बे जा।
जागो मियां सिद्ध लोई पीरा मेरेया
सूइने कोटे रुपे मढ़ी धन-धन साजन हरेया
गुर मेरे अल्ला।
दुआ नांव लइये मांमे लोद्ये दा
आऊरा छमाइया भरदो रब्ब देंदा रोजे
रोजेया दे सरदार गुर मेरे अल्ला।
तीआ नांव लइये सरगे जी दा अल्ला
शब्द करो सरकार मेरे सइयां
चौथा नांव लइये भैरो छड़िये अल्ला

मुरिया दा सरदार गुर मेरे अल्ला।
पांजवा नांव लइये पांजा पीरा अल्ला
शब्द करो सरकार मेरे साईंयां
ये दरगार हस्ता पइया खीजन वाला
न काये मेरे साईंया गुर मेरे साइयां
लिख पखना मथरा जो भेजे
चानो मरद सदा पास नीला तेरा घोड़ा।
हथ बरछी मुंड़े कमान
जिथे चढी आया सिद्ध लोई नंगा
मुखा ना देखेया कोए गुरु मेरे अल्ला।"

यह स्वांग ठीक रात्रि के बारह बजे दिखाया जाता है। स्वांग के अन्त में मुख्य नायक नचार लम्बी अरदास का उच्चारण करता है -

"राम तूं, रहीम तू, रखे तूं, रखावे तू
बक्शे तूं, बक्शावे तु, रखले सकल जहान की टेर,
आकाश तूं, पाताल तू, जल तूं, थल तूं, बाड़ तूं, पहाड़ तूं
देह तूं, कदम तूं, बाग तूं, बाग में बीज तूं,
बीज में कली तू, कली में फूल तू, सांस तूं, ग्रास तूं,
सासा पेशकारा, नीले घोड़े का स्वार
तूं मालिक मेरा आपे नरणयकार, मरदा के सौ से बाहर। अदि तूं, जुगाद तूं, जुगाद में अर्श तूं, अर्श के कुर्श,
कुर्श के मेहर मण्डल, मेहर मण्डल के छैल देव,
छैल देव के महासुन्न, महासुन्न के बेटे, कैलाश देव
कैलाश देव के सिद्ध चानो, बली फराको, महादानों,
रख ले बाब सकल जहान की टेर।

काश तेरी चोटी, पताल तेरी जड़ा
जहां सिंऊरीये, वहीं है वहीं है बाबा तू खड़ा।
बाबा बलिमरदान, तू गढ़ मथरा का पहलवान

हक ते रख बलि, चूक ते रख बलि
घोर ते रख बलि, गलेलते रख बलि
अग्ग ती ज्वाला ते, पानी दे रवाल ते
घोड़ी दे दौड़ ते, हाथी दे पौड़ ते
रख ले, रखा ले, वख्श दे, बख्शा ले,
तूं बख्श दा पल्लू।

हाथ दे के रखवाली, पल्ला दे के ढ़क बली
नीला तेरा घोड़ा, मोतिए जड़ा प्लान
हाथ तेरे बरछी मुड़ें धरी कमान
काश भैरों, पताल भैरों, मक्के भैरों, मदीने भैरों
रखे भैरों, रखावे भैरों, बख्शे भैरों
भैरों की छड़ी, दरगाह में खड़ी,
दैत-भूत की हवा के घड़ो, धड़ी,
जैसा मुख वैसी चपैड़,
लैं, बाबा ख्वाजे बुलाव, जैसे ढण्डे आप वैसे झोले बरताव
लगे काया के दरद गंवाओ, डूबते जहाज को बेड़े लगाओ।

गरीब नवाज़, मेहर का घोडा, पौण की आवाज,
लड़ेगा तेरा सखी सूरमा, मारे जाएंगे पापी देगे बाज,
पीर मकबूलियां, तू भागी जमयां, चारो खूंटांकबूलियां
सुन्ने की तेरी सेज, रुपे का तेरा पंख
डाग-डैणी को लगे तेरे नाम का धक्का
मगना हाथी, लाल अम्बारी, उस पर चढ़ी पंजपीरा दी सवारी,
लाल खां बली तेरे दरबारी,
सहत्तर सौ बहत्तर बलाय फनाह के मारी।"

इसके वाचन के साथ हस्तबली का स्वांग समाप्त हो जाता है।

12
काली, हनुमान और भैरों का स्वांग

यह स्वांग विशुद्ध भक्तिपूर्ण नाट्य है। इसमें मां काली शेर की सवारी पर, माथे पर मुकुट धारण किये, सिर पर लाल चुनरी धारण किये, हाथ में खड़ग आदि पूर्ण हार सिंगार के साथ मंच पर विराजमान की जाती है। एक अन्य पात्र लाल लंगोट पहने, गेरु से मढ़ी कमीज पहने, गले में माला, पैरों में घुंघरु पहने भैरों के वेश में एक हाथ में चिमटा और दूसरे में खप्पर लिए अखाड़े में घूमता है और भयानक दृश्य उपस्थित करता है। हनुमान के दिव्य वेश में तीसरा पात्र भी अखाड़े में संगीत के साथ उपस्थित होता है। इसमें देवियों के कई भजन गाये जाते हैं। इस आयोजन में दर्शकों के बीच से कई स्त्री-पुरुष अखाड़े में आ जाते हैं जिनको 'ओपरा' या जादू-टोने की शिकायत होती है, वे जोर-जोर से चिल्लाने लगते है। सिर-बाजू को निर्ममता से धरती पर पटकते हैं और हिंगरने (कांपने) लगने हैं। कई लोग मूर्च्छित हो जाते हैं, कई नंगे पांव आग पर चलने लगते हैं।

इस अवसर पर 'डाऊ' को भी 'खेल' आ जाती है। वह काली माता के अधिकृत वक्ता के रूप में पीड़ितों के प्रश्नों का उत्तर देता है। इस स्वांग में सवा दो किलो कढ़ाई बनाकर प्रसाद चारों ओर अखाड़े से दूर फेंका जाता है जो भूत-प्रेतों के 'मक्ख' देने के रूप में उनसे मुक्ति हेतु प्रदान किया जाता है।

नचार मण्डली का कोई सदस्य दर्शकों के बीच दीपक एवं धूपयुक्त थाली फेरकर दान की राशि भी एकत्र करता है। इस आयोजन में हास्य-व्यंग्य की प्रधानता नहीं रहती।

इस कार्यक्रम में देवियों की स्तुतियों के साथ हनुमान की गेय-स्तुति भी की जाती है -

"अंजनी दा जाया
मेरे हनुआ बीरा
आगे हुनमान चले
पीछे भैरो-काली
मेरे हनुआ बीरा ...."

इसे कही "डाऊ का स्वांग" भी कहा जाता है क्योंकि कोई भक्त डाऊ बनकर इनसे आशीर्वाद मांगता है -

"बग्गा शेर खड़ेया दर तेरे
दर्शन देया देविए,
बारह बरसा मारु-मारु सीऊ रेया
अकबर कांगड़े चढी आया, राणी जो गया।"

धाज्जा नाट्य के स्वांगों में मध्यकाल के मुस्लिम आचारों का प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है। तन्त्र-मन्त्र की प्रधानता हिमाचल के अन्य नाट्यों में भी परिलक्षित होती है। धाज्जा में मुस्लिम पंज मलंगों की स्तुति की जाती है। धार्मिक स्वांगों के अतिरिक्त करयाला की तरह धाज्जा में भी रात भर दर्शकों के मनोरंजन के लिए हल्के-फुल्के (स्कीट) स्वांग प्रस्तुत किए जाते हैं।

बिलासपुर में 'नटणी के स्वांग' में भानुमती के खेल प्रमुख रहते हैं, इसमें कई करतब दिखाये जाते हैं। पुरुष वेष में मुकुट लगाकर, घुंघरु बाँधे नारी वेशधारी पुरुष तलवार पर पांव और पेट के बल चलता है। हाथ के ऊपर ज्योति की थाली जलाकर धुमाना, तलवार घुमाते नाचना आदि। डाऊ-चेला का स्वांग, नाहर सिंह बजीये का स्वांग, हनुमान भैरो का स्वांग,

गद्दी गद्दण का स्वांग, पहाडिया देव का स्वांग, जैण्टल मैन का स्वांग, आदि जनसाधारण की रुचियों एवं भावनाओं पर आधारित लोक-नाट्य दर्शकों का खूब मनोरंजन करते हैं। मण्डी, ऊना, कुल्लू, सोलन आदि क्षेत्रों में भी ये नाट्य वर्तमान में प्रचलित हैं। समय एवं परिस्थिति के अनुसार इनमें न्यूनता आ गई हैं फिर भी वर्णित धार्मिक भावना से जुड़े स्वांग आवश्यक रूप से दिखाये जाते है।

'रोहलू का स्वांग', 'साधु का स्वांग' 'पहाड़ी पहाड़न का स्वांग' 'लैला-मंजनू का स्वांग, 'नाहर सिंह की झांकी', 'मुसाफिर का स्वांग', 'लाल फकीर का स्वांग', 'ब्राह्मण का स्वांग' आदि दर्शकों को लोट-पोट कर देते हैं।

गद्दी-गद्दन का स्वांग

इस स्वांग में गद्दी-गद्दन बने दो पुरुष पारम्परिक वेश-भूषा में अखाड़े में आते हैं। माता की भेंट के बाद गायक यह गीत गाते हैं -

"भलेया वे गद्दण नचणे जो आई मित्रा बे ....
भलेया मुकाल गुरा दा डेरा मित्रा बे ....
असे आद गुरु दे चेले मित्रा बे ....
मेरे मालतिया दे फूला बे ...."

ये दो गीत गाते हैं साथ में वादक भी गाते हैं और अन्य कालाकर नृत्य करते हैं। गद्दी हाथ में हुक्का लिए होता है। इसमें बीच-बीच में कलाकार उनसे हंसी-मजाक भी करते हैं।

कहते हैं गद्दन बहुत खूबसूरत थी। बकरिया चराते हुए राजा ने उसे देख लिया। उसने उसे अपने महल में लाना चाहा।

इसका वर्णन इस गीत में मिलता है -

"लोकां दिया बाड़ी गद्दण बकरियाँ चारदी
अबे देखी जाणी चंदरे सपाइये।
एकी सपाईये राजे गे चुगलियां लौंदा
गद्दन देहरे जोगी वे मेरे देशा रेया राजेया।

चार सपाई राजा दो जोड़ियां
अबे गद्दण महला जो सदाई,
मेरिये नौखिये गद्दणी।

इस प्रकार में गद्दी-गद्दण की मनोव्यथा तथा राजाओं की निरंकुशता का स्वाभाविक वर्णन मिलता है।

13
वीर नाहर सिंह की झाँकी

नाहर सिंह वीर की झाँकी भक्तिभाव से निकाली जाती है। यह देव युवा स्त्रियों पर आसक्त होता है, अतः इसकी स्तुति की जाती है :-

"लंबड़ी वणदी टोपी मेरे नारसिंह बीरा
तेरे लक्का बणदा डोरा मेरे नारसिंह बीरा
तेरे गले बणदा कंठ मेरे नारसिंह बीरा
तेरे कमरां बणदा चोला मरे नारसिंह बीरा।"

स्तुति के बाद दर्शक देव को रुपये-अनाज आदि चढाते है। एक अन्य गीत -

"नार सिंह वीरा, मेरे नार सिंह वीरा।
सिंवलो रे डाले तेरा बासा हो वीरा।
गोरा चिट्टा मुखड़ा तेरा हो वीरा ...."

14
अंग्रेज जैण्टल मैन का स्वांग

आजादी से पूर्व अंग्रेजों का राज होने के कारण अंग्रेज अफ़सेरों का जनसाधारण से कोई सम्पर्क न था। वे अच्छी हिन्दी भी नहीं बोल पाते थे। अतः इस स्वांग के माध्यम से जैण्टलमैन का स्वांग दिखाया जाता है -

"बाबू आई गया जैटेलमैन,
फटी री टोपी, लाल बनियान
बाबू आई गया जैंटल मैन
हाथ में सोठी, मुंह में पान
बाबू आई गया जैण्टल मैन
दूजे हाथ में लाल टैन।"

एक व्यंग्य में अंग्रेज मेम साहिबा को जब 'कुकड़ी की रोटी' दी जाती है तो वह उसे प्लेट समझती है। वह साग-सब्जी के लिए प्रतीक्षा करता है - इस पर विदूषक व्यंग्य करता है -

"ये लो मेम साहिबा
आधी रोटी बाई साग
तेरे नांगे मुण्डे लाई आग
ये साहब मुआ तेरा नभागा।"

ये स्वांग में अंग्रेजी के शब्दों की नकल से दर्शक लोट-पोट हो जाते हैं।

15
गजरेटियों का स्वांग

गजरेटियों के स्वांग में प्रारम्भ में अखाड़े में दो पात्र एक पुरुष एवं एक पुरुष पात्र सुन्दर स्त्री गजरेटी बनकर आते हैं। वे देवी के भजन पर नृत्य करते हैं किन्तु बाद में वे श्रृंगारिक मुद्राएं धारण कर लेते हैं। इसमें एक अन्य पात्र द्वारा थाली - प्रदर्शन का स्वांग होता है जिसमें वह नंगी तलवार लिए नृत्य करता है। वह पेट के बल लेटता, कांच और बल्ब के टुकड़ों पर नंगे पांव चलता है। बाद में नृत्य में जोकर भी शामिल हो जाता है। इसमें दर्शकों के मनोरंजन के लिए गजरेटियों से छेडछाड़, फिल्मी गीतों का गायन, गिद्दा, भेंट आदि नृत्य गीतों से वातावरण मधुर बन जाता है।

इन कार्यक्रमों में दर्शक प्रसन्न होकर रूपये भेंट करते हैं, जिनके लिए एक कलाकार गाकर 'बेल' रूप आशीर्वाद देता है -

"जय जगजननी ज्वालामुखी, खूब रचायो खेल,
हो दाता मेरे खूब रचायो खेल ......
ये दस रूपये बबलू प्रधान ने दिये
और हमने खरीदी साड़ी,
यही हमारी आशीस है, बबलू के घर आये लाड़ी
हो दाता मेरे घर में आवे लाड़ी ...."

यह बेल धाज्जा-नाट्य के समस्त आयोजन में दान लेने के समय गाई जाती है।

16
रोहलू का स्वांग

इस नाट्य में रोहलू नाम का पात्र नंगे पांव, फटेहाल कपड़ों में एक भिखारी के रूप में आता है जो रविदासी जाति से सम्बन्ध रखता है। इसकी गरीबी, अस्पृश्यता को ध्यान में रखकर ठाकुरों पर व्यंग्य किया जाता है। किन्तु उसकी वेषभूषा और बातचीत को सुनकर दर्शकों की हंसी फूट पड़ती है।

रोहलू की असहाय अवस्था से स्वर्ण जातियों पर व्यंग्य कसे जाते हैं। रोहलू से संवदेना के साथ उसकी हरकतों से दर्शकों का मनोरंजन भी होता है।

17
साधुओं का स्वांग

साधुओं का स्वांग धाज्जा-नाट्य का सबसे रोचक नाट्य होता है। इसमें एक पाखण्डी, ढोंगी साधु होता है और दूसरा ज्ञानी साधु। इनके साथ एक सुन्दर स्त्री भी अखाड़े में शोभा बढ़ाती है। इसमें ज्ञानी साधु ढोंगी से प्रश्न पूछता है, जिनका उत्तर ढ़ोंगी साधु बड़े व्यंग्य और चुटीले उतर से दर्शकों को मनोरंजन

करता है। करयाले में जहां 8-10 साधुओं का जमघट चिमटा खड़का-खड़का करके एक दूसरे को धक्का-मुक्की करते व्यंग्य-बाण छोड़ते हैं, वहाँ धाज्जा में दो साधु ही प्रश्नोत्तर करते हैं।

ज्ञानी साधु का ढोंगी साधु व्यंग्यात्मक ढंग से जवाब देता है-

ज्ञानी साधु :- नारायण, नारायण, अलख नारायण बाबा।

ज्ञानी :- किधर देस तुम जोगी आये, कहां तुम्हारा गांव
कहां तुम्हारी बहन, भानजी, कहां धरोगे पांव

ढोंगी :- पूर्व से हम जोगी आये, पच्छम हमारा गांव
विन्द्रावन से चल के आये, यहीं धरेंगे पांव

ज्ञानी :- कौण तुम्हारी, बहन भानजी, कौण तुम्हारी माता
कौण तुम्हारे संग चलेगी, कौण करे दो बाता

ढोंगी :- दया हमारी बहन भानजी, धरती हमारी माता

लिया दिया संग चलेगा, धरम करे दो बाता।

ज्ञानी :- किसने दिया यह टंडक-मंडक, किस ने दी यह मृग छाला, किसने दिया यह भगवा वस्त्र, किसने ने दी यह जगमाला।

ढोंगी :- गुरु ने दी यह टंडक-मंडक, गुरु ने दी यह मृग छाला,
गुरु ने दिया, यह भगवा वस्त्र, गुरु ने दी यह जगमाला।

ज्ञानी :- क्या नहीं अबला कर सके
क्या नहीं सिंधु समाये
क्या नहीं अग्नि कर सके
क्या नहीं काल खा जाये।

ढोंगी :- अकेले पुत्र न पैदा अबला कर सके
खुशी न सिंध समाये
यश न अग्नि भस्म कर सके
नाम को काल न खाये।

गंभीर वार्तालाप के पश्चात सवाल-जवाव चुटकीले बन जाते हैं-

ज्ञानी :- माता थी गर्भ में, पिता थे कुंवारे, अरे बाबा तब जन्म कहां थे तुम्हारे?

ढोंगी :- माता थी गर्भ में, पिता ये कुंवारे, दादी के फड़कू में हम चूसते थे छंवारे!

ज्ञानी :- अरे ढोंगी, यह तो कोई उत्तर नहीं हुआ।

ढोंगी :- आम्मा थी गर्भो दे पिता थे कंवारे,
नानूए म्हारे आस्से, ल्याये थे त्वारे
आज दुनिया देखो म्हारे नजारे।

ज्ञानी :- "आसन बिन्दा, आसन बिन्दा, आसन गुरु गोविन्दा" - इसका मतलब बताओ।

ढोंगी :- आसन बिन्दा, आसन बिन्दा, आसन गुरु गोविन्दा
अरे सात भारे लकडुवा रे, खाड्डा खे कऊं नी नींदा।

इस प्रकार घण्टे-डेढ़ घण्टे तक यह स्वांग चलता रहता है। दर्शक हंस-हंस कर लोट-पोट हो जाते हैं। बीच-बीच में लोग रूपये दान में देते हैं तो ये कलाकार गाकर 'बेल' द्वारा आशीस देते हैं -

"जय जननी ज्वालामुखी खूब रचायो खेल
एक रूपया राजुए दित्या, उनकी बधावे बेल .....
माता जी, उनकी बधावे बेल ...."

करयाला में आधुनिक सामाजिक परिवर्तन को भी बखूबी दर्शाया जाता है। जातिवाद, रूढ़िवाद तथा परिवारों के टूटने की ओर भी अनेक पद्यों द्वारा सुनाया जाता है -

कपिला गाय धोबी घरे, ब्राह्मण बकरी चराये
ऊंच की करनी नीच करे, कोली वेद सुनाये
पुत्र-पुत्री बैठे-चबारे, बूढ़ा हल चलाये
माया-बावा रा कहणा न माने,
भौंक-भौंक मरी जाये।
ऊँट को झोलणा, भेड़ को सूत्थणा,
बान्दरो रे गले मोती पहनाये
मैहश के आग्गे मरदंग बजाये
उल्लू रे आग्गे कविता पाठ सुणाये

18
लाल फकीर-रोड़ा साईं का स्वांग

यह स्वांग धाज्जा नाट्य का अन्तिम स्वांग होता है। यह प्रातः चार बजे तक चलता है। लाल फकीर अखाड़े में आमन्त्रित समस्त ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त साधु-सन्यासी, परी पैगम्बरों तथा 96 करोड़ देवी-देवताओं को 'भक्ख' देकर सम्मान विसर्जित करता है। भक्ख एक रोट होता है जो 'थान' के पास भेंट किए गए आटे से उल्टे तवे पर बनाया जाता है। स्वांग के सभी पात्र और आयोजनकर्ता के परिवार के सदस्य मशाल सहित गड्ढा देवता के पत्थर पर रोट चढ़ाते है। उस पर चौमुखा दिया जलाया जाता है। नाट्य समाप्त करने की स्तुति की जाती है। रोट टुकड़े चारो दिशाओं में फेंक दिए जाते हैं तथा बचे हुए रोट के टुकड़े उपस्थित दर्शकों में नैवेद्य के रूप में बांट दिए जाते हैं। लाल फकीर पवित्र अलाव की भस्म लोगों को बांटता है। आयोजनकर्ता नाट्य मण्डली को 'नशरावां' (अन्न) तथा पारिश्रमिक के रूपये भेंट करता है। मनौती करने वाला मशाल को स्वयं 'घ्याने' (अलाव) में अग्नि में समाहित करता है। इसके साथ धाज्जा समाप्त हो जाता है।

इस स्वांग में लाल फकीर एक गुरु होता है और रोड़ा साईं एक भगत होता है। उनमें ज्ञान चर्चा होती है। ज्ञान चर्चा के शास्त्रार्थ में रोड़ा साईं हार जाता है अतः वह लाल फकीर का शिष्य बन जाता हे। एक प्रश्न इस प्रकार है -

"किसने दिया बाग-बगम्बर,
किसने दिया छटकण-मटकण

किसने दिया टिकरी माला
किसने दिया मृग छाला?

रोड़ा कुछ उत्तर नहीं दे पाता। तब लाल फकीर फकीर स्वयं उत्तर देता है -

"बाग-बगम्बर दिया ब्रह्मा
पार्वती ने दिया छटकण-मटकण
विष्णु ने दिया टिकरी-माला
शिवजी ने दिया मृगछाला।"

इस स्वांग में ज्ञान-ध्यान और दार्शनिक गीत गाये जाते हैं। बीच-बीच में मण्डली के सदस्य टोका-टोकी प्रश्न आदि भी करते रहते हैं।

इस स्वांग की प्रसिद्ध भजन-स्तुति है -

"जाग पहरे देया सुतेया
तेरी दाढ़ी जो लगेया बूर
आगा तेरा नेड़े आ गया
तेरा पीछा रह गया दूर
जाग पहरे देया सूतेया
तू झाड़ू दे मसीत
आप सूतेया रब्ब जागदा
तेरी दाढ़ी नाल प्रीत
न्याओ लगेया पीरा तेरा नाव दा।"

19
पंज मलंग का स्वांग

सिद्ध चानो की तान्त्रिक पूजा के अतिरिक्त मध्यकालीन समाज में प्रचलित अन्य लोक-देवों यथा नारसिंह, पहाड़ी वीर, तथा अन्य 52 वीरों की स्तुतियों एवं तान्त्रिक-पूजा की तरह मुस्लिम पंज-पीरों (पंज मलंग) की पूजा परम्परा भी धाज्जा नाट्य में वर्तमान है। चानो का प्रमुख भक्त नचार कुछ इस प्रकार पंज-मलंग का स्तुति-वर्णन करता है –

"चले चालीस, पंज-शेर।
"अल्लवी" कहे मुहम्मदां।
किसी दा इक बेटा, किसी दे दो बेटे,
असी खाली क्यों चले, जाओ अल्ला के दरे
या खुदा सानू भी बेटा बख्शो।
यक्के पुराने कागज़, अल्ला लिखित करें
लिखदा-लिखदा थक गया, फिर भी कलम न मुड़े
पंताली यंत्र लिख, मुहम्मद आगे घरे।
जाओ मुहम्मद अल्लवी नो घोल-पिला दो
फिर मुहम्मद घर को मुड़े, पंताली यंत्र घोल-पिला दित्ते।
कुछ सयम बाद पंताली बच्चे आ उसकी गोद पड़े।
'अल्लवी' कहे मुहम्मदा ऐह बच्चे मेते मत पले ......।
हुक्म हुआ चाली मलंगा-जा दिल्ली गजा करो।
पांव लाही दस्तार, अपणे-अपणे नंग ढके।

गुमटे ते बाहर हुए, दिल्ली जान्देया हुक्क तिल मिला
घोट मलंगी पी ला, रब्ब खाना कित्ता।
खबर होई चाली मलंगा नो, मक्के अंदर मौत पई
उत्थे हाजी बहुत मरे, चताली मलंग मक्के नो सीधे चले -
जेड़ी हवा होगी इनको देख बकरी रूप घर छिपे ...."
मुहम्मद साहब देखदा दस्तार,
दस्तार मत मिले,
माड़ी कित्ती मुण्डेयो, मेरी दस्तार क्यों वेद घरे,
गुस्सा हो जबर अली न,
पगदा लड़ फाड़ेया-लौ पेचे पूरे करे।"

20
गड्ढा देवता को न्याय के लिये 'जंगारना'

जब कोई व्यक्ति न्याय के लिए गड्ढा देवता की मनौती करता है उसे गड्ढा देवता का 'जंगारना' (जगाना) कहते हैं। नचार देवता से प्रार्थना करता है कि निर्धारित अवधि सात दिन, पन्द्रह दिन या एक मास में प्रार्थी को न्याय मिले। प्रार्थी पांच सेर चूरी, इक्यावन या एक सौ एक रूपये काली गर्दन वाला बकरा अर्पित करता है। वह 'नाचुआं धाज्जा' की मनौती भी कर सकता है। जिस व्यक्ति के विरुद्ध जंगार किया जाता है उसके साथ खान-पान, रोटी बेटी का सम्बन्ध खत्म कर दिया जाता है।

गड्ढा देवता का खोट लगते ही दोषी व्यक्ति को खून की उल्टियां शुरु हो जाती हैं। इसे 'सीनी आग' कहते हैं, अर्थात धीरे-धीरे दोषी व्यक्ति मौत के कगार पर पहुँचे जाता है। मान्यता है कि यह देवता चोरी, झूठ आदि पर एकदम दोष को सजा देता है।

21
गड्ढा देवता के देवस्थान

हिमाचल प्रदेश के विभिन्न भागों में बाबा बली के 'थान' स्थापित किए गये हैं। एक शोध प्रबन्ध के अनुसार निम्न देवस्थान आज भी जीवन्त हैं तथा हजारों श्रद्धालु इन स्थानों पर बिना जाति-पाति के देवयात्रा को जाते रहते हैं -

1. गढ़ मथुरा का थान-बाबा बली का सर्वप्रमुख थान है।
2. मटौर का थान - माई मसूर का थान
3. रेती बिलासपुर का थान - भक्त बारु का थान
4. वागडू अर्की का थान - श्यामा भक्त का थान
5. सिद्ध डांगड़ा बल्याणा का थान - लालू - भादरु का थान
6. सिद्ध समैला का थान - भक्त दासू का थान
7. छपल छड़ी (चण्डीगढ़ के पास) थान - भक्त तारु-बारु का थान
8. मलेटे का थान - नैना देवी थान - भक्त बारु का थान
9. सेर (कहलूर) का थान - भक्त दऊडू का थान
10. खरोटा खुरनी का थान - भक्त किरलू, सरनू का थान

इनके अतिरिक्त गुरदासपुर, हमीरपुर, नालागढ़, रामशहर, जाबली, काई, धरजा, नौणी में भी देवता का पवित्र स्थान हैं।

22
सिद्ध-चानो एक शक्तिशाली एवं भयानक देवता

चानो एक भयानक देवता है जो हाथी पर चलता है। उसके पीछे उसकी पूरी जमात चलती है। उस जमात के रास्ते में सामने कोई नहीं आ सकता। चानो के परिवार को ही 'जमात' कहा जाता है। इसकी जमात में हाथी-घोड़े और असंख्य गण तीन सौ पचास सिरकियां, गीदड़मार, नीच, बरड़ और नीच प्रकार के पिशाच रहते हैं। वह मुकुट धारण कर हाथी पर राजा के समान यात्रा करता है। माना जाता है कि इस जमात में 64 जोगणियां, 52 पीर, ख्वाजापीर नीली घोड़ी सवार, भैरों देव और पहाड़ियां आदि साथ होते हैं।

चानों की मनौती के प्रमुख वार शनिवार और रविवार हाते हैं। रविवार को 'करड़ावार' कहा जाता है तथा इस दिन को प्राथमिकता दी जाती है। यह भयंकर रोगों और पशुओं के रोगों से छुटकारा दिलवाता है। इसे पशुदेव के रूप में भी पूजा जाता है। यदि कोई पशु बीमार हो जाए अथवा उसे भयंकर रोग, खुर, मुंह का रोग हो जाये तो चानों की स्तुति और मान्यता की जाती है। गौ-भैंस यदि गाभिन न होती हो तो भी मन्नत की जाती है। मनोकामना पूर्ण होने पर इसे चूरमा (गुड और मक्की की रोटी का चूरा) मक्की के भूने दाने तथा रूपये चढाये जाते हैं। इसे गाय-भैंसां का प्रथम दूध-घी और नई फसल का रोट अथवा आटा भेंट-स्वरूप चढ़ाया जाता है।

नचार तंत्र-मंत्र पद्धति से चानो देवता के प्रकोप से मुक्ति दिलाता है। कांगड़ा क्षेत्र में यदि किसी व्यक्ति को चानो का प्रकोप लग जाये तो इसका चेला तांत्रिक-विधि से कच्चे सूत के तीन धागे लेकर दोषी के सिर से स्पर्श करता है जिससे दोषी के कंपकंपी आ जाती है। चेला, बड़ा देव जो चानो जमात का प्रतिनिधि होता है, के माध्यम से चानो देवता से क्षमा-याचना करता है। नाक से लकीरें लगाकर या दण्डवत क्षमा याचना करवाई जाती है। बड़ा देवता के माध्यम से दोषी को समझाया जाता है और दोष-मुक्त करवाया जाता है। तांत्रिक जब आवेश में होते हैं तो हिंगरने (खेलने-कांपने) लगते हैं। वे सांकल से जोर से प्रहार करते हैं और चीख मारते हैं फिर श्रद्धालुओं के सवालों का जबाब भी देते हैं जिसे 'पूछ' कहा जाता है। कांगड़ा क्षेत्र में चानों के थान-डुहक, बलियाणा, रक्कड़, मानगढ़, चलाली, वाथू, टिप्परी, जखुणिया, डाडासिवा, धियोड़ी, पंचरुखी आदि में आज भी वर्तमान हैं।
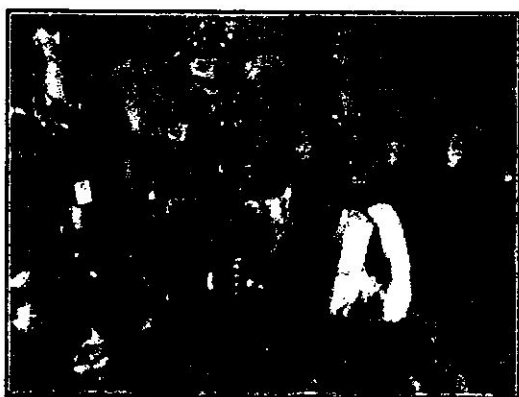
23
लोकनाट्य करियाला

सभ्यता के प्रारम्भ से ही मानव अपने मनोभावों को संकेतों एवं ध्वनियों के माध्यम से प्रकट करता रहा है। इन संकोतों से ही भाषा का जन्म हुआ था। मानव विकास के साथ सामाजिक व्यवस्था में विकास के लिए दूसरों का सम्मान तथा परोपकार आवश्यक गुण थे, अतः सीधी भाषा द्वारा दूसरों को बुरा न लगे, इसलिए विरोधी भावनाओं को प्रतीकों अथवा अप्रत्यक्ष प्रसंगों द्वारा समझाने का प्रयास हुआ। लोक-साहित्य मानव सभ्यता एवं संस्कृति के क्रमिक विकास का प्रतिरूप है। समाज में जियो और जीने दो के लिए जीवन-मूल्यों को लोक कथाओं, वीर गाथाओं, जन श्रुतियों, ढकोसलों एवं लोकगीतों के माध्यम से अतिरंजित रूप से मौखिक लोक-साहित्य में व्यक्त किया जाता रहा है।

राज-व्यवस्था में मौखिक लोक-साहित्य को व्यवस्थित रूप देना प्रारंभ हुआ। यह राज-व्यवस्था के नियम-कानूनों को समझाने के लिए भी आवश्यक था। राजसत्ता के पक्ष में काव्य रचने वाले कवियों कलाकारों कलाकारों को राजकीय सम्मान एवं अनुदान मिलता था। काव्य अथवा साहित्य स्वस्थ मनोरंजन, सामाजिक भावना और आमोद-प्रमोद के साधन के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा।

प्राचीन संस्कृत-साहित्य में विद्वान कवि, कलाकार नवरत्नों के रूप में राज-सभाओं को अलंकृत करते थे। कविता के अतिरिक्त नाटकों की

रचना में भी उस समय के लेखकों का विश्व में कोई सानी नहीं था। कालिदास के नाटकों का ऐतिहासिक और राष्ट्रीय महत्व तो है ही, अन्य नाटककार अश्वघोष, भास, भवभूति उस समय के महान नाटककार थे। आज भी उन महान नाटकों का उतना ही साहित्यिक महत्त्व है। अभिज्ञान शकुन्तल, वेर्णा संहार, मालविकाग्निमित्र, मुद्राराक्षस आदि इसी प्रकार की युगीन रचनाएं हैं।

संस्कृत के नाटक सम्भ्रांत वर्ग एवं विद्वानों के मनोरंजन की दृष्टि से लिखे गये। आम नागरिकों के लिए इन नाटकों का कोई महत्व नहीं रहा। एक वर्ग विशेष जो राजसत्ता के आस-पास था, इन नाटकों एवं काव्यों का रसास्वादन कर सकता था। सम्राट अथवा राजा प्रोत्साहन के लिए काव्यकारों को पुरस्कृत करता था और भूखण्ड प्रदान करता था। संस्कृत नाटकों का विधान शास्त्रीय था। उनमें विद्वता का प्रदर्शन होता था। संस्कृत नाटक प्रेक्षालयों एवं क्रीड़ालयों में उद्घोषक नाट्य-अभिनय के साथ पार्श्व से मंच की गतिविधियों को संचालित करता था। जो दृश्य अभिनीत नहीं हो पाते थे, उन्हें उद्घोषक या सूत्रधार आकाशवाणी या वर्णन द्वारा दर्शकों को सुनाता था। संस्कृत नाटकों का स्वरूप विशुद्ध शास्त्रीय एवं अभिजात्य वर्गानुकूल था।

जन साधारण में इसके समान्तर एक अलग नाटक की धरा थी जो जनभाषा में प्रदेशों में विकसित होती रही। इन्हें लोक नाटकों का नाम दिया गया है। भले ही लोक-नाटकों का शास्त्रीय आधार नहीं था, किन्तु इनकी संरचना शास्त्रीय आधार की प्रतिक्रिया के स्वरूप अस्तित्व में आई।

संस्कृत में 'नाटक' विधा "रुपक" का एक प्रकार है। प्राचीन दरबारों में (11वीं सदी तक) रंगमंच पर रुपकों का मंथन किया जाता रहा। रुपकों को दृश्यकाव्य कहा जाता था और अन्य को श्रव्य काव्य। रुपक के 10 भेद थे - नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, इहामृग, अंक, वीथी, प्रहसन। इनमें प्रकरण, भाण, व्यायोग, अंक, वीथी और प्रहसन

में एक ही अंक होता था। समवकार में तीन अंक, डिम और ईहामृग में चार अंक और नाटक में पांच से दस अंक होते थे।

संस्कृत की इन नाटक विधाओं में कथानक की भिन्नता के अनुसार इनका वर्गीकरण किया गया था। इनकी कथावस्तु में ऐतिहासिक कथाएं, पौराणिक कथाएं एवं वीर सम्राटों से सम्बन्धित कथाएं रहती थीं। इनके नायक देवता, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस आदि हो सकते थे। प्रायः सामयिक समस्याओं को वर्तमान की तरह चित्रित नहीं किया जाता था। कल्पना एवं अतिरंजना का पुट नाटकों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता था। इन नाटकों का काव्यमय होना कवि-नाटककार की योग्यता का मापदण्ड भी था। रंग-मंच पर प्राकृतिक दृश्यों एवं युद्ध के दृश्यों को काव्यमय वाचन से प्रदर्शित किया जाता था।

इन्हीं नाटकों की प्रतिक्रिया के रूप में जनसाधरण हेतु लोक नाटकों की परम्परा विकसित हुई। पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में राजनीतिक परिवर्तन 13-14 वीं शताब्दी में मुगलों के मध्य भारत में आक्रमणों एवं राज्य-स्थापना के कारण हुआ। अनेक रजवाड़े, सामन्त, राजकुमार, मुगलों के आक्रमणों से पराजित होकर हिमाचल की ओर सेनासहित एवं माल असबाब सहित हिमालय के क्षेत्रों में छोटे-छोटे राज्य स्थापित करने में समर्थ हुए। इन क्षेत्रों के छोटे-छोटे निरंकुश शासकों ने उनके आगे घुटने टेके अथवा अपने क्षेत्रों से दूसरी जगह भाग गये। मध्यभारत एवं दक्षिण भारत के उन योद्धा राजकुमारों के पास आधुनिक अस्त्र-शस्त्र थे जबकि पहाड़ों में लड़ाई के हथियार नाम-मात्र थे। हिमाचल की संस्कृति एवं धर्म 13-14 वीं शती में स्थापित रजवाड़ों, ठाकुरों एवं राणाओं के संरक्षण में विकसित हुये। दरबारों में राम, कृष्ण एवं पौराणिक-ऐतिहासिक कथाओं का मंचन होने लगा। प्रायः दरबारों में नृत्य-नाटकों का मंचन होने लगा। 9-10 वीं शती में नाथ-पंथ के साधुओं का समस्त देश के समाजिक जीवन को प्रभावित कर रहा था। नाथों, सिद्धों और विभिन्न धार्मिक मतों के साधुओं द्वारा तंत्र-मंत्र अभिचार, आडम्बरों एवं चमत्कारों से भोली जनता त्रस्त थी। किन्तु कुछ

स्वतन्त्र साधु-सन्तों ने रुढ़ियों, परम्पराओं का विरोध करना शुरु कर दिया। तत्कालीन साहित्य इसका प्रमाण है। ये तथ्य तत्कालीन लोक श्रुतियों एवं लोक नाट्यों में अभिव्यक्त भी हुए हैं।

इसके परिणामस्वरुप जनसाधारण में इन ढोंगी साधुओं संतों के विरुद्ध आक्रोश पैदा हुआ। यह तत्कालीन संत-काव्य में देखा जा सकता है। भारतीय साहित्य में कर्मकाण्ड, आडम्बरों का घोर विरोध मिलता है। लोक नाट्कों में साधुओं के स्वांग का विशेष स्थान है। इसके अतिरिक्त पहाड़ी लोकनाटकों में राजाओं के शोषण, निरंकुशता, व्यभिचार एवं तत्कालीन विसंगतियों का चित्रण मिलता है। लोक नाटकों का प्रारम्भ रजवाड़ों के पहाड़ी प्रदेशों में राज-व्यवस्था कायम करने से माना जा सकता है, क्योंकि इससे पूर्व यहां कोई व्यवस्थित राज्य नहीं थे।

हिमाचल की 18 टकुराइयां एवं छोटी-छोटी टकुराइयां उसी समय स्थापित हुई। इन्हीं रियासतों में लोक नाट्क करियाला, धाज्जा, चन्द्रौली, चन्द्रावली, बरलाज एवं रास लीला की परम्परा मिलती है। ये विधाएं तत्कालीन प्रारंभिक हिमाचल की परम्परा में मिलती है जिनमें 30 रियासतें सम्मिलित थीं। इनके अतिरिक्त इनकी पड़ोसी रियासतों सुकेत सिरमौर, मण्डी, कहलूर, नालागढ़ के क्षेत्रों में भी इनका प्रचलन मिलता है।

प्राचीन काल में राजदरबारों में नृत्यांगनाओं के लिए रंग-शालाएं अथवा रंगमहल होते थे। धार्मिक-ऐतिहासिक रुपकों को भी रंगमंचों, क्रीडालयों, नाट्य शालाओं में अभिनीत किया जाता था। ये आयोजन राजमहलों के प्रांगण तक सीमित थे।

शास्त्रीय परम्परा के इन नाटकों-नृत्यों से प्रभावित विभिन्न क्षेत्रों में अपनी भौगोलिक और धार्मिक परिवेश के अनुसार लोकनाटकों का उद्भव एवं विकास स्वाभाविक रूप से हुआ। हिमाचल प्रदेश के करियाला, बरलाज, चन्द्रौली, धाज्जा, स्वांग, बांटड़ा, बुढड़ा, भगत, रासलीला, रामलीला, हरणांतर आदि लोकनाट्य मध्ययुग से हिमाचली क्षेत्रों में प्रचलित रहे हैं।

हिमालय के शिवालिक अंचल में विशेषकर सोलन जनपद में लोकनाट्य करियाला, बरलाज, धाज्जा, चन्द्रौली आदि की परम्परा मिलती है। इस क्षेत्र के ठोड़ा, धूप्पू, नुआला, जगराता आदि नृत्य-नाटिकाएं नाट्य की तरह आयोजित होती थीं। ये नृत्यगीत, लोकगाथा गीत अथवा ऐतिहासिक खेल के संदर्भ में देखे जा सकते हैं, क्योंकि इनमें कथावस्तु एवं नाटक का कलेवर नहीं पाया जाता।

"करियाला" लोक नाटक

करियाला लोकनाटक सोलन क्षेत्र के समस्त क्षेत्रों में मध्यकाल 15-16 वीं शताब्दी से प्रचलित रहा है। इसका विकास भज्जी क्षेत्र में अधिक रहा। सिरमौर क्षेत्र में भी सुकेत क्षेत्र की तरह करयाला समान रूप से प्रचलित रहा है। इसी प्रकार समीपवर्ती शिमला के क्षेत्रों ठियोग, कोटी, मधान, क्योंथल, धामी, कोटखाई, आदि रियासतों में करयाला की समृद्ध परम्परा रही है।

"करयाला" शब्द "क्रीड़ालय" शब्द का अपभ्रंश है - क्रीड़ालय, करिआला, करियाला, करयाला आदि के स्वाभाविक वाचिक परिवर्तन से 'करियाला' का स्वरूप बना है। भाषा शास्त्र एवं विद्वानां के अनुसार भाषा जटिल से सरल की और स्वाभाविक रूप से परिवर्तित होती रहती है। प्राचीन दरबारों में 'क्रीड़ालय' होते थे जिनमें रुपक, नृत्य आदि आमोद-प्रमोद की गतिविधियां होती थीं। 'क्रीड़ालय' का अभिप्राय है आमोद-प्रमोद के खेल, हास-विलास एवं मनोरंजन का स्थल या कक्ष। लोकनाट्य करियाला प्रकृति के खुले आंगन में लोक कलाकारों द्वारा खेला जाता है। सम्पूर्ण करियाले में हास्य-विनोद एवं मनोरंजन का कथानक होता है। स्थानीय भाषा की प्रधानता रहती है किन्तु उसमें पंजाबी, उर्दू और मनघड़ंत भाषा का प्रयोग होता है। इसका आयोजन गांव के बीच, किसी बड़ अथवा बड़े पेड़ के नीचे, देव-चबूतरे के पास अथवा बिल्कुल खुली

जगह होता है। करयालची चादरों के तम्बू-नुमा प्रसाधन कक्ष में विभिन्न हास्य-मुद्राओं के परिधानों में तैयार होकर बाहर आते हैं।

करियाला स्थल के मध्य में एक बड़ा 'अलाव' जलाया जाता है जिसके चारों तरफ घूमते हुए करयालची अभिनय करते हैं। करयाला के स्थल को 'अखाड़ा' कहा जाता है। करियाला कक्ष के सामने केले के चार तनों से एक तोरण-द्वार बनाया जाता है जिसे पीपल, आम, केला, पाजा आदि के हरे पत्तों से सजाया जाता है। अखाड़े के चारों ओर गेंदें के फूलों की मालाएं बांधी जाती हैं। अखाड़े में अभिनय क्षेत्र के चारों ओर करयालचियों द्वारा एक सीमा रेखा खींची जाती है जिसके अन्दर करयाला खेला जाता है। इसे "अखाड़ा बांधना" कहते हैं।

करियाला ग्रामीण क्षेत्रों में मनोरंजन का प्रमुख साधन था। थके-हारे किसान अच्छी फसल घर आने के पश्चात अपने इष्ट को प्रसन्न करने के बहाने एवं देवताओं की पूजा के बहाने मनौती स्वरूप करियाले का आयोजन करके आनन्द प्राप्त करते थे। करियाला खरीफ की फसल के पश्चात दीवाली के पश्चात समस्त क्षेत्र में मनाया जाता रहा। प्रायः दीवाली के 20 दिन बाद 'देवटन', देवोत्थान एकादशी के दिन करयाला, अर्की, भज्जी, क्योंथल, बघाट, चण्डी, ठियोग, कोटी, सलोगड़ा आदि क्षेत्रों में आवश्यक रूप से मनाया जाता रहा। वैसे दीवाली के पश्चात कभी भी कार्तिक मास में करियाले का आयोजन शुभ माना जाता था। करियाले का आयोजन रात्रि के 10 बजे से प्रातः काल तक होता था कहीं-कहीं इन क्षेत्रों में आज भी करियाले की परम्परा है।

करयालची

करियाला में भाग लेने वाले कलाकारों को 'करयालची' कहा जाता है। ये 7-8 कलाकार होते हैं। कहीं-कहीं इनकी संख्या 15 तक होती थी। प्रारम्भ में करयाले में दलित वर्ग, अनुसूचित जाती तथा तूरी जाति के लोग भाग लेते थे किन्तु बाद में इसमें कनैत, ब्राह्मण लोग भी भाग लेने लगे।

करयाले के वाद्य-यन्त्र

करियाले में कुछ निश्चित वाद्य-यन्त्र होते हैं। साधरणतया ढोल, नगाड़ा, करनाल, हारमोनियम, नरसिंहा और शहनाई इसके प्रमुख साज-बाज हैं। इनमें संगीत के ताल जंग, कहरवा, और दादरा प्रमुख हैं। इन साजों का पंचम-स्वर में उद्घोष रात्रि भर चलता है जो मधुर एवं सम्मोहित करने वाला होता है। लोक यन्त्रवत् कार्यक्रम को देखते रहते हैं।

चन्द्रौली से करियाला का श्रीगणेश

करयाले के दृश्य से पहले अदृश्य-शक्ति की स्तुति के लिए खुले प्रांगण में बने अखाड़े में चन्द्रावली का प्रवेश होता है। चन्द्रावली स्त्री-वेश में सुन्दर साड़ी में सुसज्जित एवं मालाओं द्वारा अलंकृत अखाड़े में प्रारम्भिक-शास्त्रीय नृत्य करती है जो 10 बजे से प्रारंभ होकर आधे घण्टे से एक घण्टे बाद तक शहनाई और ढोले-नगाड़ों के घोष के बीच संगीतमय वातावरण बनाता है और करियालाचियों को तैयारी का समय देता है।

चन्द्रावली को कृष्ण की सखी माना जाता है जिसे धार्मिक भावना से लक्ष्मी का रूप माना जाता है। चन्द्रावली के हाथों में एक थाली में एक दीपक जला होता है जिसके साथ वह नृत्य करती है। चन्द्रावली के नृत्य के बाद लक्ष्मी स्तुति एवं आरती "जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे" गाई जाती है।

इसके पश्चात कृष्ण का दो-तीन सखियों के साथ मुकुट आदि के साथ अखाडा-मंच पर प्रवेश होता है। जो कृष्ण के रूप में सुसज्जित होता है। उसे "कान्ह" कहा जाता है। ये भजन स्थानीय परम्परा एवं "ब्रह्मानन्द" भजनावली के होते हैं।

कांस्य थाली में जलते दीपक को चन्द्रावली-नृत्य के बाद एक करियालची लोगों की भीड़ में आशीर्वाद को ले जाता है। लोग श्रद्धा से उसमें पैसे, सिक्के आदि भेंट करते हैं। भजनों से प्रसन्न होकर लोग जब

रुपये दान देते हैं तो कृष्ण की सखियां बने करयालची गाकर आशीर्वाद देते हैं -

"जय जननी ज्वालामुखी खूब रचाइयो खेल
एक रुपैया श्री अमरु ने दिया, उनकी बधावे बेल ....
मैया जी खूब बधावे बेल।"

इस गेय आशीर्वाद को 'वेल' कहा जाता है। इस मध्य सभी साधु 2-3 भजन सुनाते हैं। इस प्रकार करियाला में प्रमुख से साधुओं का स्वांग, नट-नटणी का स्वांग, प्रेम प्रसंग, एवं व्यंग्य घटनाएं अभिनीत होती हैं। सभी कलाकारों द्वारा लोकगीत एवं फिल्मी गीत गाये जाते हैं। इस प्रकार 3-4 अंकों में विभाजित करयाला में दर्शकों को भरपूर व्यंग्य एवं मनोरंजन मिलता है। इस क्रम में करयालची स्थान विशेष के अनुसार सामग्री सम्मिलित करते रहते हैं। विभिन्न भगवा लम्बे-चौड़े वस्त्रों एवं हाथों में सामग्री लिए साधुओं का जमघट मंच पर बम-बम भोले अथवा अन्य उच्चारण करते प्रवेश करते हैं।

साधुओं का स्वांग

चन्द्रावली और साधुओं के भजन के बाद करयाले के अखाड़े में अद्भुत जटाधरी एवं लम्बे-लम्बे चोगों अथवा केवल लंगोट पहले दो-तीन साधु बाहरी खेतों की दिशाओं से 'अलख-निरंजन' 'बम-बम भोले' करते प्रवेश करते हैं। कोई चीखता है, कोई अजीब आवाजें निकालता है, कोई जंगली जानवरों, भालू, शेर, और भेड़िये की आवाजें निकालते हैं। विभिन्न मुद्राओं को देखकर लोग हंस-हंस कर लोट-पोट हो जाते हैं। अखाड़ा मंच पर पहुंचने से पहले वे पर्दे के पीछे से कुछ भजन भी गाते हैं -

"पहले गणपत पूजिये पीछे करिये काम
सभा बेगानी बैठ के लाज रखे भगवान"

एक साधु :- साधो की नगरी बसे न कोय जो बसे सो साधु होय।
दूसरा साधु :- जोगी की नगरी बसदा न कोय

जो ही बसे सो ही जोगी होय

तीसरा साधु :- दो-दो बार ऐसे दोहे का उच्चारण करते साधु अखाड़ा मंच प्रवेश करते हैं। एक दम कहरवा ताल में डंका. ढोल, करनाल, नगाड़ा और शहनाई का संगीत गूंज उठता है। सभी करयालची साधु वाद्य-यन्त्रों को प्रणाम करते हैं। एक प्रमुख करयालची ग्राम मुखिया सब को सम्बोधित करते पूछता है -

"नमो नारायण बाबा, तुम कहां से आये हो बाबा?
बेटा, हम ऋषिकेश, बद्रीनाथ, गया चार
धाम करके आये हैं।"

मुखिया :- बाबा, तुमसे हम ज्ञान-ध्यान की बात पूछे
क्रोध तो नहीं करोगे?

एक साधु :- नहीं बेटा, ज्ञान-ध्यान की बात बताएंगे
(एक अन्य मसखरा साधु एक दम जवाव देता है-) क्रोध तो नहीं करेंगे बेटा लोभ करेंगे।'
(लोग हंस पड़ते हैं।)

मुखिया :- किधर देश से तुम जोगी आये, कहां तुम्हारा गांव
कहां तुम्हारी बहन भानजी, कहां धरोगे पांव।

साधु :- पूरब से हम जोगी आये पच्छम हमारा गांव
धरती हमारी बहन भानजी, यहां धरेंगे पांव।

मसखरा साधु :- किस ने दी ये टंडक-मंडक, किसने दी ये मृग छाला?

साधु :- गुरु ने दी ये टंडक-मुडक, गुरु ने दी जगमाला
गुरु ने दिया यह भगुआं वस्त्र गुरु ने दी ये मुगछाला

मसखरा साधु:- मैं भी शेले-टंड का मारा घर को चाला

मुखिया :- कौन तपस्वी तप करे, कौन नित उठ रोज नहावे?
कौन अमृत रस उगले, कौन इस रस को खाये?

एक साधु :- सूर्य तपस्वी तप करे, ब्रह्म नित उठ नहाये।

इन्द्र देव रस को उगले, धरती सब कुछ खाये।

मसखरा साधुः- जप-तप मुआ एअरा जाणो बाओ
जेती एसखे खाणे खे मिलो, तेती ये रोज आओ।
(सब हंस-हंस के लोट-पोट हो जाते हैं)
साधु अखाड़े में फिरते रहते हैं और विभिन्न हास्य चेष्टाएं करते रहते हैं। दृश्य में आगे साधुओं का वार्तालाप चलता रहता है -

मुखिया :- माता की गर्भ में, पिता ये कंवारे
तब कहां ये जन्म तुम्हारे?

साधु :- ना बच्चा ना, ज्ञान-ध्यान की बातें करो सुनो।

मसखरा :- सुनाओ।

साधु :- ना बच्चा ना, ज्ञान-ध्यान की बातें करो, सुनो

मसखरा :- सुनाओ।

साधु :- तो सुनो-माता थी गर्भ में पिता थे कंवारे
पिता के मस्तक पर, ये जन्म हमारे।

मसखरा साधुः- धन्य हो महाराज, आपको शत-शत प्रणाम।
(अगले दृश्य अन्तराल मैं दो तीन साधुओं द्वारा इसी प्रकार हास्य वार्तालाप होता है।)

साधु :- ''काहे कारण झोली-बाऊगली काहे कारण मूठा
काहे कारण शिर मुंडाये काहे कारण टूठा,

मसखरी :- ''भिक्षा मांगण झोली बाऊगली, माखीया डवाणे मूठा
जूंआ कारण शिर मुंडाये, रोटीखाणे खे टूठा।

एक साधु :- जय-जय शिव शंकर, कांटा ना लगे न कंकर।

दूसरा साधु :- अरे दरिद्री, कुछ खाने-पीने का ढंग कर।

पहला साधु :- बम-बम भोले, बम-बम भोले

दूसरा साधु :- देख रहा मैं लाट साहब के उड़न खटोले

तीसरा साधु :- एक मछेरन सागर तट पर डाल रही थी कांटा

पहला साधु :- अरे, मुझे भी लगा ज्ञान का चांटा।
दूसरा साधु :- चरपट हो तुम बड़े रसीले, एक आंख से लगते भोले
तीसरा साधु :- तन के खोटे, मन के भोले, नाड़े के तुम ढीले।
पहला साधु :- तेरे मन पर काई छाई, पहले इसको धोले भाई,
बम-बम भोले, बम-बम भोले।
तीसरा साधु :- भांग-धतूरे की यह माया
पहला साधु :- जोगी इसमें क्यों भरमाया।
दूसरा साधु :- अन्त समय कुछ हाथ न आया
सभी साधु :- (समवेत) छूटे कुटुम्ब कबीले, बम-बम भोले,
बम-बम बोले।

एक अन्य कथानक में साधु फिर ज्ञान-ध्यान का वार्तालाप शुरु करते हैं।

मुखिया :- एक का मतलव क्या है?
मसखरा साधु:- जिसको कोई न हो।
दूसरा साधु :- नहीं बच्चा, अभी तुम अक्ल के कच्चे हो।
मसखरा साधु :- फिर आप बताइये, एक क्या होता है।
दूसरा साधु :- एक हैं ओंकार, दो चांद-सूरज, तीन त्रिलोक, चार दिशाएं, पांच पाण्डव, छः ऋतुएं, सात ऋषि, आठ अष्ट भुजाएं, नौ ग्रह।
मसखरा साधु :- (बीच में) दश हुए दशांग, सोलहवे दिन सोला, दरवाजे पांदे फोड़ा ठूठा, सतारवें दिने देखया गूठा।
पहला साधु :- आसन बांधू पासन बांधू, बांधू कांचन काया,
चार ऊंगल तेरा सिर का खोपड़ा, जटा कहां से लाया।
मसखरा साधु :- आसन खोलूं पासन खोलू, खोलूं कंचन केरी काया
चार ऊंगल एसरा खोपड़ा, जटा उधर है लाया।
पहला साधु :- आसन के मंत्र बोलो रो बेटा।
मुखिया :- आसन बिन्दा आसन विन्दा आसन बैठे गुरु गोविन्दा

जो जाने आसन की बात, उनके कटे जन्म के पाप।

मसखरा साधु :- आसन बिन्दा, आसन बिन्दा आसन गुरु-गोविन्दा।
सात भारे लकड़िया रे खाड़ुडा खे कऊं नी नींदा।

पहली साधु :- अरे भाटड़े, यहां ज्ञान की बात हो रही है।
ठीक बात करो।

मसखरा साधु :- आले दीर्त्ती छवाल पताले जम्या,
बहुए दीर्त्ती धूब साथे सौरा जम्या।

फिर मुखिया साधु गंभीर होकर संस्कृत के श्लोक गाता है -

"नाहम वसामि बैकुण्ठे, योगिनाम् हृदये न च मम
भक्तया यत्र गायन्ति, तत्र तिस्ठामि नारदा।" और -
माता शत्रु पिता वैरी, येन वाले न पाठयन्ति
शोभन्ते सभा मध्ये यथा उल्लूक काकव -"

साधुओं का स्वांग आधे घण्टे से डेढ घण्टे तक चलता रहता है। इसमें कथानक कम-ज्यादा हो सकते हैं। इसी भाग में 'जोगण का स्वांग' भी बहुत लोकप्रिय रहा है।

मुखिया :- 'किसने जो देखे बड़े गाजे बाजे
किसने जो देखे बड़े भूप राजे
किसने जो देखी बड़ा क्षमा करनी
किसने जो देखी बड़ी जगत-जननी
किसने जो देखा बिना काल मुआ
किसने जो देखा बिना पांख सुआ'

साधु :- इन्द्र के देखे बड़े गाजे-बाजे
सद्गुरु जे देखे बड़े भूप राजे
माता जो देखी बड़ी क्षमा करनी
पृथ्वी जो देखी बड़ी जगत जननी
सोया जो देखा बिना काल मुआ

मन को देखा बिना पांख सुआ।

दूसरा स्वांग या अंक

नट और नटणी का स्वांग बहुत रोचक होता है। इसे "बंगाला-बंगालिन" का स्वांग भी कहते हैं। इसमें नट कुछ अद्‌भुत करतब दिखाता है। इसमें तीन करयालची होते हैं जो रंग-विरंगे लम्बे-लम्बे कुर्ते, फटे-कुर्ते, पटटू और बड़ी-बड़ी पगड़ियां पहने होते हैं। एक पुरुष नटण बनती है जो साफ सुथरे कपड़े और भारी भरकम आभूषण-हार आदि पहने होती है। नटों के हाथों में बड़े-बड़े डंडे होते हैं। कभी-कभी ये करयालची नेवला, गोह या कुत्तों को भी साथ लाते हैं। वास्तव में ये नट उस सुन्दर नटनी को प्राप्त करने को लड़ते हैं और मजाक करते हैं। अखाड़े में पहुंचते सभी नट गणेश की स्तुति गाते हैं -

"गणपति गणेशा बनाइयो मोरी देवा रानी।"

यह स्तुति करयाला दलों की अलग-अलग होती है। नट गाने लगता है - "बंगाले दी बंगालण नाची मेरी ऊध्धौ।' फिर एक मुखिया करयालची पूछता है -

मुखिया :- तुसी केड़े देश ते आये? केड़ा तुहाडा जिला?

नट :- साडा जिला हिसार।

मुखिया :- तुहारी जात की हैगी?

नट :- साडी जात नट हैगी।

मुखिया :- तुसी मुसलमान जट होंदे?

नट :- नहीं, नहीं भरावां, आसी मुसलमान नी होंदे।
असी हिन्दू होंदे हन।

मुखिया :- तुहाड़ी पोशाक मुसलमान दी हैगी?

नट :- ये नशाणी मार्शले दी है, असी उदी समय लुटींये है।
उदौं अस्सी हिन्दू होंदे ह न।

मुखिया :- ये नट्‌टण की दी है?

नट :- ये मेरी ऐ, ये मेरी ए, सभी नट लड़ते हैं।

इस लड़ाई में मुखिया फैसला करता है कि नटण जिसे पसंद करेगी, उसकी बन जाएगी। नटण कहती है कि जो नट उसे अच्छे गाने सुनाएगा, वह उसी की हो जाएगी। अन्त में नट विभिन्न प्रकार के पहाड़ी, फिल्मी गीत गाते है जो एक घण्टे तक चलता है। नटण एक नट की हो जाती है।

नाटी-शिमला-सोलन क्षेत्र

हाय, हाय जमाना सिंगिया,
हाय, हाय जमाना सिंगिया .....
सिंगिया जमाना बोले तेरे नैणा रे लो भे .....
जमाना सिंगिया .....हाय .....हाय ....।
वार धारा दे बाकरी चरो पार धारा दे गौरू
औरु छोडे मुआ हाथो री ऊंगले,
आऊं लोके री जोरु। जमाना सिंगिया, हाय ....।
हाथा दी बैटरी, जेबा दी घड़ी
शाली रे जंगले छिमर्पा पड़ी
मेरिया टेऊगा मेरीयां देशा,
खाचरी पांदे भुतड़ा वेशा।

नाटी (भज्जी क्षेत्र)

ओ मेरे चम्बे चिम्बे दिया धारां
लोटा घीयू रा बेटी मेरी कमला
नहीं लगा पता तेरे जिऊ रा .... बेटी मेरी कमला ...
लाल कुरता हाय बेटी कमला,
देखे कहीं रे कमला रे। बेटिया तेरी खतरा हो
नारे लगी रे हो मेरी कमला ......।

नट-नटणी के द्वारा स्थान विशेष के लोकगीत अथवा भजन प्रस्तुत किये जाते थे। पचास-साठ के दशक में रोमांटिक फिल्मी गीत भी गाये जाने लगे -

महासू क्षेत्र की लोक प्रिय नाटियाँ

शिमले खे चिठी लिखणी सोलणी खे तारो
भाइयो सोलणी खे तारो
इशा बोले चन्द्रामणी के आमो बड़ी बमारो
भाइयो आमो बड़ी बमारो।
शिमले बजारो बणो सूतो री दरी
भाइयो सूतो री दरी
इशा बोले चन्द्रामणी के आमो गोई मरी
भाइयों आमो गई मरी।
"लाड़ी शावणी"
लाड़ी शवणीए नारे मनाणा बुरा
हो म्हारी बातो रा ......
वार सामणा शिमला शिमला पार सामणा जाखा
मोटी-मोटी तेरी हाखटी दाइये
का जो जोगा नी राखा
हो लाड़ा शावणिये ना रे मानवा ....

गिद्दा

जाई आऊणा छोरुआ, जाई आऊंणा रे
तातापाणी ज्योरी न्हाई आऊणा रे
खाई लैणी छोरीए ओ खाई लैणी रे
दूध वे जलेवी खाई लैणी रे .....
लोगों की फरमाईश पर गंगी भी प्रस्तुत की जाती थी -

गंगी

तेरे कोटे दे बजे तबले
रातों भी ना हांडे छोरुआ
तेरे वैरिया ने लणे बदले

....

चंद चढ़ी गया चांदडुए रा
होर लोभ किएं नीं लागा
चाव लागा तेरे दांदडुए रा।

....

नई कणका रे चाणे फुलके
आज छोरी पावणे तेरे
कल जाणा वे बगाने मुलखे।।

झूरी-लोकगीत-महासू-भज्जी क्षेत्र

1. सइये बोलूं भजिये पन्दरीये सगेते
   रोले आये रीजके हमें, कोये आऊणे ये एबे
2. उबे देशा री बावड़ी, ऊंदे देश्शा रे कुएं
   झूटे दित्ते वचन न्याल-न्याल रे कुएं
3. टाण्डे बोले पाणिये चूल्लू आंदले पीणा
   साज्जा था सबी रा नईं, कस चक्की रो नीणा।
4. आंडखे बोलू ना पांडखे, एखी वसू मान गावों
   कर्दी देखणे आखिये कर्दी बोलो शुणने धैं नावों
5. कौं तेरे पावणे कौ तेरे वे बचारे
   रोटा राखे चाणी रो आसे आऊणे पांवणे तेरे
6. चिट्टी तेरी आंखरी, काले काजले रांगी
   आधी राखे आपो खे आधी तेरे सांजणे मांगी। (वेली भज्जी क्षेत्र)

करियाले में छोटे-छोटे स्वांगों के साथ स्थानीय प्रेम लोक कथाएं रांझू-फुल्मू, कुंजू-चंचलो, गद्दी-गद्दन, मोहणा, आदि लोक नाट्य भी प्रस्तुत किये जाते रहे हैं। नाटी, गिद्दा, गंगी, झूरी, लोका, भजन आदि बिना क्षेत्र की सीमाओं के करयालची प्रस्तुत करते रहे हैं।

यह गीत नट्टन की पसंद के नहीं होते और वह उन दोनों नटटों को झगड़ता हुआ छोड़कर चली जाती है।

प्रेम प्रसंग

एक लड़की जो भाग जाती है

एक कहानी में एक लड़की की कहानी का वर्णन होता है जिसमें वह अपने माता-पिता की इच्छाओं के विपरीत अपने प्रेमी संग भाग जाती है। 'मीना' नाम की एक लड़की जो मुनसीफ़ (Judge) की लड़की होती है, एक दिन विद्यालय से अपनी सखी प्रेमलता के साथ घर वापिस हो रही थी, तभी वह नूरमूहम्मद नामक मुसलमान लड़के से मिलती है जो उसे छेड़ता है। मीना उसके व्यवहार को पसंद नहीं करती और उसे डाँटती है :-

नूरमुहम्मद :- अजी शराफत से पूछना भी कोई गुनाह है?

मीना :- अच्छा आप जाईये, अपना रास्ता नापीये।

अगले ही चौराहे पर वे जुदा हो जाते हैं और नूरमुहम्मद उसे हाथ हिलाकर अभिवादन करता है जिसका मीना भी प्रत्युत्तर देती है। मीना की सहेली इसे पसंद नहीं करती और उसे डाँटती है। मीना यद्यपि यह स्पष्टीकरण देती है कि वह तो मच्छर भगा रही थी जो उसके चेहरे पर बैठ गया था।

अगले ही दृश्य में यह दर्शाया जाता है कि मुन्सिफ़ और दीवान मीना के स्कूल से देरी से आने का इन्तज़ार कर रहे हैं।

मुन्सीफ़ :- दीवान साहिब, मीना अभी तक स्कूल से नहीं आई।

दीवान :- महाराज, आ ही गये होंगे।

जैसे ही मीना घर पहुंचती है उसके पिता ने देरी से आने का कारण पूछा। नूरमुहम्मद के बारे में बताने के बजाय वह झूठ बोलती है और कहती है कि स्कूल में नाटक चल रहा था इस वजह से वह देरी से आई। इसी बीच जब मुन्सिफ़ अपनी कचहरी में होते हैं, तभी श्याम लता नाम की एक पहाड़ी लड़की आती है और उनसे प्रार्थना करती है कि उसे अपने पति से तलाक चाहिए।

वह कहती है कि उसके पति ने दूसरी महिला से शादी कर ली है और वह दो वर्ष से उससे दूर है। वह शिकायत करती है कि उसके पति उसे भोजन और कपड़े नहीं देता और उसके कपड़े फट गये है। मुन्सिफ़ पति को बुलाता है और श्यामलता के हक में फैसला देता है। मीना अपने पिता से बाहर जाने की अनुमति माँगती है, सड़क पर जहाँ कम चल रहा है। मुन्सिफ़ नहीं चाहता कि इज्ज़तदार घरों की लड़कियां इस तरह से सड़क पर घूमें लेकिन वह सहेली के साथ जाने की अनुमति प्रदान कर देता है। वह प्रेम लता को साथ जाने के लिए कहता है। निर्माण कार्य की ओर जाने की बजाय वह नूरमुहम्मद की ओर जाती है जिससे वह सुबह मिली थी। उसकी सहेली इसे पसंद नहीं करती परन्तु वह करबद्ध प्रार्थना करती है और वह उस चौराहे की ओर जाती है जहाँ नूरमुहम्मद उनका इन्तज़ार कर रहा था। मीना मज़ाक करने लगती है बावजूद इसके कि उसकी सहेली कहती है कि वह सब कुछ मुन्सिफ़ को बता देगी। नूरमुहम्मद उसे कुछ रिश्वत देता है जो कि उसके लिए पर्याप्त नहीं है। काफी सौदेबाजी के बाद नूरमुहम्मद उसे दस हज़ार नकली नोट देने को कहता है जिससे प्रेमलता असली समझकर उन्हें रख लेती है। मुन्सिफ़ लड़की की शादी के बारे में चिन्तित है और दीवान से इस विषय पर बात करता है। रिवाज के अनुसार लड़के वाले ही रिश्ता ढूंढ़ते हैं। मीना वापिस होती है और उनको बातचीत करते हुऐ चोरी से सुन लेती है। वह तुरन्त वापिस जाती है और सारी बात नूरमुहम्मद को सुनाती है। वह उसे किसी और शहर में भाग जाती है। पिता उसे गुम होता देख दुःखी हो जाते हैं। वह शर्मिन्दा होकर

मामले को पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करवाता है, जो उसे आखिर में ढूंड लेते हैं। अपराधियों को मुन्सिफ़ की कचहरी में लाया जाता है जहाँ नूरमुहम्मद अपनी बेगुनाही के लिए कहता है और सारी गलती मीना की बताता है। वह कहता है कि मीना ने उसे भागने के लिए कहा था। मीना गुनाह को कबूलती है और उसे अपनी मर्ज़ी से शादी करने की गुजार लगाती है। मुन्सिफ़ उसके हक में फैसला सुनाता है और उसे कभी चेहरा न दिखाने को कहता है। दोनों वहाँ से चले जाते हैं और नूरमुहम्मद उसे इलाहाबाद ले जाता है, मीना देखती है कि उसके पति बहुत गरीब हैं और उसके पहले से ही पति और बच्चे हैं। वह निराश हो जाती है और आत्महत्या कर लेती है। यह नाटिका करयालचियों द्वारा आधुनिक जीवनयापन पर तैयार किया गया है जिसका माता-पिता की ईच्छा के विरूद्ध जाने की बर्बादी बताई गई है।

रोहलू का स्वाँग

एक लघु नाटिका जो कुछ समय पहले काफी प्रसिद्ध थी और अब खत्म हो गई है, वह है रोहलू का स्वाँग। इस एकाँकी में चार व्यक्ति भाग लेते थे। एक साह (साहूकार) बनता था और दूसरा मुनीम। रोहलू, नौकर और साहनी साह की पत्नि। रोहलू विदूषक की भूमिका में होता था। रोहलू का स्वाँग एक ऐसी कहानी है जिसमें रोहलू एक विदूषक नौकर का किरदार निभाता है। साहनी अपने माईके (पिता के घर) गई है और 'साह' उसे वापिस लाना चाहता है। किसी को उसे वापिस लाने के लिए भेजना चाहता है। मुनीम और रोहलू आपस में चर्चा कर रहे हैं कि कौन उसे (साहनी को) साथ में लाएगा।

मुनीम :- रोहलुआ, साहणिये लाणे जो तैं जाना या मैं?
रोहलू :- मैं जाणा।
मुनीम :- मुआ, तु कलमुंहा है, मैं जाना।
रोहलू :- मुआ, मैं ही जाणा। कलमुहं नई, ऐ पोडर लाई रखा।

अन्त में यह निर्णय होता है कि रोहलू ही साहनी को लाने जाएगा। वह मजाकिया बर्ताव करता है जब उसे छोटे नोट चाहिए तो दस रूपये के नोट के दस टुकड़े करता है। दो कदम आगे और दो कदम पीछे लेता है। जब उसे दौड़कर जाने के लिए कहा जाता है। साहनी को जब वह पीठ पर उठाकर लाता है तो हंसी के ठहाके लगते हैं। अन्त में यह दिखाया जाता है कि साह की मृत्यु हो जाती है और साहनी शोक और विलाप करती है। रोहलू उसे सांत्वना देता है। उसका वियोग के समय शादी का प्रस्ताव रखना अत्यधिक हंसी पैदा करता है।

करियाला और लोकगीत

'करियाला' एक स्थानीय शब्द है जो हिमाचल प्रदेश के रियासतों में लोक नाटकों से उद्धृत है। कुल 7 या 8 लोग लड़कियों के वेश में बिना किसी जाति व उम्र के भेदभाव से सुसज्जित होते हैं। हमने किसी महिला को इसमें भाग लेते नहीं देखा। यह प्राचीन समय से एक प्रसिद्ध तमाशे के रूप में प्रसिद्ध है। इसकी मुख्य लोकप्रियता हिमाचल के ग्रामीण श्रोतों में है जहाँ मनोरंजन के साधन नहीं है। कोई निश्चित बोली नहीं है जिसमें करियाला का मंथन किया जाऐ, परन्तु इसमें शब्दों का प्रयोग इस तरह से किया जाता है कि जिससे हंसी निकल जाऐ। ज्यादातर हिस्सा स्थानीय भाषा में होता है. और इसे आकर्षक बनाने के लिए हिन्दी, उर्दू, पंजाबी या पहाड़ी का प्रयोग किया जाता है।

करियाचली (1957 में धामी आयोजित करयाले के आधार पर)

जो लोग या पात्र इसमें भाग लेते हैं, विशेष समूह या इस व्यवसाय में पारंगत व्यक्ति. उन्हें करियालची कहा जाता है। शकरोड़ी वह धामी के करियालची इसमें प्रमुख रूप से प्रसिद्ध हैं। वे रामपुर, ठियोग, सोलन और कसुम्पटी तहसील तक जाते हैं और कई बार भोजन के अतिरिक्त लगभग 200 रूपये प्रति रात्रि कमा लेते हैं। करियालची के संवाद में ज्यादातर

तुकबन्दी होती है और नाटक और नृत्य में हंसी के टहाके लगते हैं। कई बार संवाद अश्लील भी होते हैं। जितनी ज़्यादा शरारतें होती हैं, उतने ही ज्यादा लोग आनन्द लेकर तालियों बजाते हैं और एक दूसरे पर मज़ाक करते हैं। अकसर करियाला दीवाली के नज़दीक किया जाता है, जब फसलें काटी जाती है और अवकाश होता है। कई बार करियाला मनौती के रूप में भी किया जाता है। इसे एक अखाड़े में जो कि चारों ओर केले के पत्तों से या पीपल के पत्तों से घिरा रहता है। किया जाता है कई बार आम के पत्तों या गुलमेंहदी के फूलों के बीच जिसमें छोटी-छोटी झंडियाँ लगाई जाती हैं, के बीच किया जाता है।

1947 का करियाला और आधुनिक समय

करियाला को स्मरण करते हुए जब हम सियुणी और शिकरोड़ी के मंचन को देखते हैं तो पता चलता है कि इसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। मन्दिर के पास या पार्क में या पीपल के वृक्ष के पास हम पुराने संगीतकारों को पुरानी फिल्मी धुनें - "दिल लूटने वाले" आदि सुन हारमोनियम पर सकते हैं।

करियाला और लोकगीत

दृश्य प्रस्तुत होने से पहले, करियालची 'चन्द्रावली' (लक्ष्मी) के रूप में आती है और हाथ में धूप-थाली होकर अखाड़े के चारों ओर जाती है तथा संगीतकार जंग ताल बजाते हुऐ, हारमोनियम, शहनाई, ढोल, नगाड़ा, करनाल आदि का प्रयोग करते हैं। यह लगभग 10 मिनट तक चलता है और अन्त 'जय जगदीश हरे' आरती के साथ होता है। इसके पश्चात कृष्ण, मुकुट सहित, और 3 सखियां आती है। इसके पश्चात, चन्द्रावली के साथ एक सखी आती है और भजन (ब्रह्मानन्द) के कृष्ण के सम्मान में गाये जाते हैं।

24
पहाड़ी लोक-रामायण - लोकनाट्य 'बरलाज'

भगवान राम जब लंका के राजा रावण को मारकर अयोध्या लौटकर आये, तो उनकी प्रिय जनता ने उस रात्रि को घी के दीये जलाकर उनका स्वागत किया था। एक विजयी राजकुमार अथवा राजा के रूप में ही जनता ने उनका स्वागत नहीं किया था, बल्कि उनके शील स्वभाव, मर्यादा एवं उच्च चरित्र के कारण भी आर्यावर्त की जनता ने उन्हें सिर माथे पर बिठाया। उनके उच्च-चरित्र एवं पराक्रम का वृतान्त मूल-रूप से वाल्मीकि रामायण में चित्रित हुआ है। उस महान वृतान्त का समस्त देश में ऐसा प्रभाव पड़ा कि संस्कृत भाषा के पश्चात लौकिक संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, पालि, शौरसेनी आदि परवर्ती भाषाओं में कवियों-चिन्तकों ने रामकथा को अपने-अपने ढ़ंग से व्याख्या किया है। अध्यात्म रामायण, पुराण, ग्रंथ, रामचरित मानस आदि में राम को आध्यात्मिक पुरुष अथवा अवतार के रूप में मान्यता मिली।

रामकथा का प्रभाव समस्त देश के लोक-साहित्य में परिलक्षित होता है। पहाड़ी लोक साहित्य में लोक रामायण का गायन होता है। हिमाचल का लोकनाट्य 'बरलाज' इसी प्रकार का लोकनाट्य है जो एक गीतिनाट्य के रूप में दीपावली की शुभ रात्रि को विभिन्न स्थानों पर प्रस्तुत किया जाता

है। 'बरलाज' में पहाड़ी बोलियों विशेषकर बघल्याणी एवं धम्याणी बोलियों के पाठान्तर मिलते हैं। बरलाज में 'रामकथा' को संगीतमय वातावरण में विशेष नाट्य-बिधा के रूप में भक्तिमय श्रद्धा के साथ प्रस्तुत किया जाता है। यह हिमाचल के बाघल, धामी, भज्जी एवं क्योंथल आदि प्राचीन रियासतों में विशेष रूप से प्रचलित रहा है। अन्य पासवर्ती रियासतों में भी इसके आयोजन की परम्परा मिलती है।

महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि जहां पहाड़ी लोकनाट्य करयाला, वांटड़ा, स्वांग आदि विधाएं औपचारिकता मात्र रह गई हैं, वहां 'बरलाज' नाट्य आज भी उपर्युक्त क्षेत्रों में जीवन्त है। आज भी शरद की शीतल रात्रियों में यह दीपावली, देवठन, शरदपूर्णिमा एवं विशेष पर्वों पर श्रद्धा एवं भक्ति से आयोजित होता है। बरलाज का गायन रात्रि को प्राचीन लोक देवता कुरगण मंढ़ोड़ के प्रांगण में देव के सम्मान में समर्पित होता है। वैसे यह विभिन्न स्थानों में देव बड़योगी, डूम, गुंगा देव, कथेशरा देव, बड़मूजा, बीजू देव आदि देवताओं को भी समर्पित किया जाता है। मनौती के रूप में यह किसी भी देवता को समर्पित होता है।

कुछ विद्वान 'बरलाज' शब्द को विष्णु के अवतार वामन एवं असुर राजा बलि से जोड़ते हैं, किन्तु बलि राजा का रामकथा से कोई सम्बन्ध नहीं है 'बरलाज' विशुद्ध रामकथा है जिसे 'पहाड़ी लोक रामायण' कहा जा सकता है। 'बरलाज' बलवान राजा रामचन्द्र के पराक्रम की गाथा है जिसे बली राजा कहा जा सकता है, यानी बली राजा राम! बली राजा से अपभ्रंश बलराज अथवा 'बरलाज'!

लोकगायकों के अनुसार राजा दशरथ के बड़ी उम्र तक कोई सन्तान न होने के कारण उन्होंने कुलगुरु वशिष्ठ के परामर्श से शृंगी ऋषि द्वारा

पुत्रेष्टि यज्ञ करवाया था। यज्ञ के फलस्वरूप ऋषि ने राजा दशरथ को 'वर' दिया था कि उसकी एक रानी से एक ऐसा प्रतापी पुत्र पैदा होगा जो उस अनाचारी युग की 'लाज' रखेगा। इसी 'लाज' रखने वाले 'वर' से पहाड़ी लोकमानस ने पहाड़ी रामायण को 'बरलाज' का नाम दिया। यह विवरण संगत मालूम होता है। वस्तुतः राम ने अपने समाज की 'लाज' रखते हुए 'राम राज्य' की स्थापना की थी।

जिस प्रकार लोक नाट्य करयाला, धाज्जा, बांठड़ा आदि 16वीं 17वीं शती में रियासती काल में अस्तित्व में आये उसी परम्परा में बरलाज भी आम जनता के मनोरंजन के लिए अस्तित्व में आया है। रियासती राजाओं-ठाकुरों के दरबारों में सामन्तवर्ग के लिए सभाएं, कृष्णलीला, रामलीला, रासलीला आदि के आयोजन के समान्तर आम लोगों ने 'बरलाज' 'करयाला' आदि का सूत्रपात किया।

बरलाज नाट्य के प्रस्तुतीकरण के लिए किसी प्रकार के मंच की आवश्यकता नहीं होती। प्रकृति के खुले प्रांगण में एक अलाव (घ्याना) जलाया जाता है, जिसकी पवित्र मोटी समिधाएं प्रातः तक जलती रहती हैं। शरद की रात्रियों में इससे प्रकाश ही नहीं, अलावा के चारों ओर बैठे कलाकारों एवं लोगों के लिए ताप भी उपलब्ध होता है। अलाव के चारों ओर दो पक्षों में दो-दो अथवा एक-एक कथागायक लम्बी-लम्बी नुकीली छड़े हाथ में लिए गायन के साथ धीरे-धीरे घूमते रहते हैं। प्रायः एक पक्ष कथा का एक-एक वाक्य लयात्मक प्रवाह में गाता है।

रामकथा के तीन भाग होते हैं। जिन्हें 'रथाव', 'छोकड़ा' एवं 'बोल' के शीर्षकों से सम्बोधित किया जाता है। 'रथाव' कथा का लयात्मक गद्य होता है जो विशेष लय एवं धुन लिए होता है।

कथा नीरस या एकरस न बन जाए इसलिए 'छोकड़ा' लोक-छन्द के माध्यम से पूर्व प्रसंग का गायन किया जाता है। यह मूल कथा के प्रवाह को छोड़कर सुनाया जाता है। अतः इसे स्थानीय भाषा में 'छोकड़ा' कहा जाता है। 'रथाव' में कथा एक रथ की गति से चलती है अतः कथा भाग को 'रथाव' कहा गया है। कथा में बोल के माध्यम से रामायण के पात्रों की स्तुति की जाती है, गाई जाती है। लोकनाट्य के वाद्ययन्त्र नगाड़ा, छैणे, खड़ताल, चिमटा, ढ़ोल आदि प्रयोग में आते हैं।

धार्मिक आचारों के साथ सर्वप्रथम अलाव की पूजा मंगलचरण से होती है। गणेश पूजन हेतु एक थाली में धूपदीप, नैषेध, नारियल पुष्प आदि के अतिरिक्त दीवाली अथवा पर्व के दिन बने पकवान घी-शक्कर के साथ घ्याने के पास चढ़ाए जाते हैं। ग्राम देवता कुरगण के मंदिर में पूजा-अर्चना के पश्चात अलाव के पास स्वास्तिवाचन के साथ ही सर्वप्रथम एक कथावाचक सृष्टिरचना के विषय में देवताओं का स्तवन करता है - इसे 'साजना' अर्थात सृष्टि रचना कहा जाता है।

भाइयो ना रे थिया देव रो दानवा, न रे थिया पूजणेहार
देव रो यो दानव यो साजिया, साजिया वेद-बचार।
भाइयो ये अंबर ये धरती न थिया, ना रे थिया पूजणेहार
धरती रो ये अंबर यो साजिया, धूरा साजिया यो बे चार।
भाइयो नांओ बे लइयो बे नरायणो रा, जिन्ने धूरा-पृथ्वी साजिया
नांओ बे लइयो ब्रह्मा वे विष्णुओं रा, जिन्ने बाहरे वेद बचारेया।

सृष्टि रचना के पश्चात देवताओं का 'आहान' 'शादणा' के अन्तर्गत किया जाता है -

"सदा भवानी दायिनी, गौरी पुत्र गणेश
तीन देवता रक्षा करे ब्रह्मा-विष्णु-महेश।"
"पैहले आया रे देवा म्हारे कुरगणा, आस्से शादे रे औखिया रे देवा
आम्सा गार्णा रे रामो री रामायण, सच-चूट जाणो रामा।
आम्सा गाणे रे रामो रे 'बोल' सच-चूट जाणो रामा।
दूजे आया रे देवा म्हारे धारावालेया आस्सा गाणे रे रामो रे रामायणा
तीजे आया रे देवा दर्वाणिया, रैय्या देवो रे दरो पांदे खड़ेया
सारी रात गाणे देवा बोल। आया म्हारी रक्षा दे देवा।"

देवताओं के आगमन के बद रामजन्म, दशरथ-श्रवण प्रसंग, शाप आदि संक्षेप में सुनाने के बाद 'पंचवटी प्रसंग' विस्तार से सुनाया जाता है। वाल्मीकि रामायण के पंचवटी प्रसंग से गौण मायावी मृग बने मारीच को 'सुइनू' के नाम से गायक अपनी उद्‌भावना वर्णन करते हैं -

देख, सिया पार्णा भरने लगो
सुइनू डालिया ते आओ,
सिया री गोदी दे बैठो।
देख, सिया गोद समेटणे लगो
सुइनू उड़ी के डालिया बैठी जाओ
देख, सुइनू था से मिरगो स रा रूप करो
देख, सिया छली जाओ।

सीता पनिहार से उल्टी गागर लेकर पंचवटी वापिस आती है और राम को उलाहना देती है।

''देख, बड़े धरो री थी आऊं देऊं। जनकपुरिया मेरा प्योका था।
देख, जेबे मारवे महलो दे ब्याही की ल्याया तो चौदहा वर्ष रा दित्या बनबास
देख, खोटे जुध्या दे देवते, सुइने रे तूसे मिरग पाली राखे। तूसे लकोई के बाई-पण्यारे राखे।
देख, सुइने रे घाई दे मिरगा, तो खाणा खाऊं, नई तो नई खाऊं।''

राम सीता को समझाते है कि लंका के दानव मायावी हैं, रूप बदलते हैं। पर सीता हठ करती है। राम धनुष लेकर मृग का पीछा करते है। ''हाथ लक्ष्मण, हाथ लक्ष्मण....'' की मारीच की आवाजें सुनकर लक्ष्मण को सीता को अकेला छोडना पड़ता है किन्तु लक्ष्मण रेखा से बाहर न आने की चेतनावनी देते हैं -

इधर दशानन सीताहरण के लिए साधुवेश में आता है -
''देख, दशु राजा था से जोगीयो रा भेश धरो
देखे, दरो पांदे सिया रे ''आलाक्ख'' जगाओ। सीता कार के अंदर रहकर भिक्षा देना चाहती है। दशु इन्कार करता है -
''देख, दरो ते बाहरे भिछया दे तो आऊं, नई तो आऊं न लऊं।
सीता मने बचार करो। जे जोगीयो खे भिछया न देऊं तो संसारो री
ईण टूटो। जे 'कारा' ते बाहर तो देवरो री ईण टूटो। यह सोचते सीता कार से बाहर आती है -

''देख दशु राजा था से सिया खे बांई ते खींजो''

देख, पंचवटीया बीचीए कशर्कींधे खे लई जाओ।' आसमान में गरुड़ दशु से युद्ध करता है। इधर राम-लक्ष्मण सीता को ढूंढते आगे शिवजी के बागीचे में हनुमान के साथ पहुंचते हैं। राम-शिवजी का युद्ध होता है जो लोक कथाकार की अपनी उद्भावना है -

> ''और देख, पैहला बाण शिवजी मारी देओ, और देख, रामचन्द्र पौणी दे डवाई देवो और देख, शिवजी री कांछी गूटीया दे कोढ़थी, ओर शिवजी खे बरदान था जे रामो रे हाथे बाण लग्गो तो शिवजी

ग कोढ़ चला जाओ। और देख, राम पैहला बाण सांदी देओ। और देख, शिवजी रा कोढ चला जाओ।"

बरलाज लोकनाट्य में लोकगायकों की अपनी ही स्थापना मिलती हैं। शिवजी राम से प्रभावित होकर उन्हें विजय का वरदान ही नहीं देते, बल्कि हनुमान जाति को भी राम को सौंपते हैं। हनुमान राम-लक्ष्मण को अंगद से मिलाते हैं। बालि वध के साथ ही अंगद और हनुमान राम द्वारा लंका दशु की कचहरी भेजे जाते हैं। लक्ष्मण सागर में शरटुओं का कच्चा सायर अर्थात् पुल बनाते हैं लेकिन उसे हनुमान पार नहीं कर पाते। राम हनुमान को अपनी यौगिक शक्ति से एक तीर पर चढ़ाकर लंका भेजते हैं। बाद में नल-नील द्वारा सागर पर पक्का सायर (पुल) बनाया जाता है।

बरलाज में हनुमान के प्रसंगों को राम से अधिक स्थान मिला है। किश्किंधा वर्णन के पश्चात हनुमान समस्त नाट्य में छाये रहते हैं। संभवतः यह पहाड़ी जनमानस में वन्य मानव जातियों के प्रति प्रेम रहा है। कथा वाचन में लगता है जैसे नाटक हनुमान पर ही केन्द्रित हो।

लंका में हनुमान अशोक वाटिका में उत्पात करते हैं -

"भाइयो.आज्ञा देओ सितला हुणु बागो खे जाओ
बागे पहुंचेया हणुआ बड़ा चयमत करो
नौलखा पवनू सेना बाग ज्याड़ने लाया
धारा ते देओ ग्वाल हाऊपा बाग बांदरे ज्याड़ेया
मेघनाथ दानुए एवे हाणु था थाम्या
सौमण ल्याओ रुइयां, सौ तेलो रा घड़ा
अंधे दानो लंका रे संई काम कमाओ
लाई लंगूरे री फुंजटी दे आग
केसी रा मुंह झुलसा, मुण्डे मुंगर बाओ
फूंकी वे बोलो दानो री सभा।"

अहिरावण और हनुमान का बरलाज में अदभुत वर्णन है। पाताल का राजा अहिरावण पत्नी सुपणा के साथ जब चौपड़ खेल रहा होता है तो

हनुमान एक ब्राह्मण का रूप धारण कर मालिन से पूरा भेद लेकर अहिरावण से युद्ध को चलता है -

''भाइयो,चली आया दानो वे प्यालो रा, बेड़े राणी सुपणा रे आओ।

दानो बोलो राणी ओ सुपणा, हणुमान युद्धो खे शादो।

खेलो चार बाजीया यो चौपड़ा, खेली लऊंगे पिछल ध्याड़े रा

बणाई बे देया झींझण रसोइया, खाई बेलऊंगे पिछले ध्याड़े रा

ब्याओ रे जो देयां मेरे कपड़े, शीरो री देया गीजा पकड़ी

काना रे जो देया बरागरा, गलो रे जे देया बे तन्दीया

भाइयो, बांई रे जो देया सलांगणा, श्यामीकरण छोडले ल्याओ

हात्यो रीया देया वे बरछीया, काटी मेरी सूइने री ल्याओ।

युद्ध शुरु होता है -

भाइयो, बाण बाओ पैहला दानो प्यालोरा, हणुआ पौणी दे डबाओ

बाण बाओ दूजा वे दानुआ, हणुआ बज़े सम्हालो।

बाण बाओ तीज्जा बे दानुआ, हणुआ धरणीया-बज्रे गाड़ो।

भाइयो, तीन बाण मैं वे सम्हालो, एक बाण एबे मेरा सम्हालेया

खण्डा रे छड़्वाओ हणुआ, दानो रे शीरो दे बाओ।

मारी बे दित्ता दानो प्यालोरा, प्यालो फिरो राम बे दुहाइया।''

पाताल प्रसंग के पश्चात संगीतमय ''गरुड़ छापा'' का गायन होता है -

भाइयो, जदकिया राचीया यो सीतला, जदका गरुड़ राचो

कि बे ल्याओ तेस गरुड़ो टोली रो, किलओ बे सिया री सम्हाला''

मेघनाद-लक्ष्मण युद्ध में संगीतमय बोलों के साथ सती-सुलो चना का मार्मिक वर्णन है - ''और देख, बाण लछमण मेघनाथो रवे बाओ। मेघनाथो रवे मारी देओ सिर धड़ाते अलग करी देओ। शिरी रामा रे डेरे खे ल्याओ।

सुलोचना पति का सिर मांगती है -

'मेघनाथो रा सिर सलोचना गे लई जाओ

दोनों जणे गल-बात करो, सलोचना मेघनाथो रा सिर लई जाओ।

विलाप करो। सलोचना चित्ता दे सती हुई जाओ।

बरलाज में गायन की यह विशेषता है कि श्रोता विभिन्न मार्मिक प्रसंगों में रो पड़ते हैं।

अन्त में ढोल नगाड़ों के युद्ध के संगीत के मध्य राम-रावण युद्ध का गायन 'वीर-रस' में सुनाया जाता है -

'भाइयो, भाइया रे मेरे विर्भीषणा, कुछ भेद देया रे दशुए रा,
जेत भेद मरे राजा दशु, तो ताखे राज लंका रा देऊं।
भाइयो, सात डिबरे वे यो शिवलो रा, जेदे रामा लोहे रा पिंजरा
पिंजरे दे होश वे दशुए रा, पिंजरा ई तोड़ेया बे नरायणा
नाभिया दे आए अमृत कुण्डुआ, वाण रामा नाभिया दे बाया।
तेबे मरो लंका रा दशुआ, हटी आया वे आपणी रामयणा।
भाइयो, तीर्कवाण बाया वे नरायणे, वीह भुजा दशुओ री वाडूडी
दशवाण वाये वे नरायणे, दश शीश दुशुए रे बाडूडे
एक वाण बाया वे नरायणे, तोड़ी दित्या अमृत-कुण्डुआ
मारी दित्या लंका रा दशुआ, लंका फिरो राम बे दुहाइया।''

विर्भीषण को राज-पाट देने के प्रसंग के बाद 'बोल' के माध्यम से देवताओं का अपने-अपने स्थानों पर ''स्थापना'' अथवा प्रस्थान करवाया जाता है -

'भाइयो, धूरा रे शादे वे यो देऊते, चऊरे धूरा रवे आपर्णाया जाओ
रामे शादे थे बाहे वे बाहे री, तूसा देवतेया बिसर्रा रो जाणा
आग्मे गाइया रामो री रामायणा, सच झूठजाणो वे नरायणा
जेर्ना गाइया रामो री रामायण, तेर्ता देओ पूतोरी वधाइया
जुग-जुग जिये देवा मंडोड़ा, सदा फूले सूइने रे फूले
राम नरायणे शादे थे औखिया रे, करी गये रामो रा पखाला
जुग-जुग जीओ रमापर्णी शुणने वालेयो, सदा फूले सुइने रे फूले।

पहाड़ी लोक साहित्य में 'बरलाज गाथा' का विशेष महत्व है। इसमें बघल्यार्णी बोली एवं धम्यार्णी बोली का मूलरूप विद्यमान है। धामी एवं

पेऊठा-अर्की से मूल-कथा की प्रति उपलब्ध होने से पता चलता है कि 'बरलाज' सर्वप्रथम 180 वर्ष पूर्व मायली गांव के गुरुचरण पंडित से प्रारम्भ हुआ। उसके पश्चात पं0 धूमीराम पं0 सुदामा राम, पं0 शंकरलाल एवं वर्तमान में प्योठा निवासी पं0 प्रेमचन्द्र इस परम्परा के बरलाज के मुख्य गायक रहे हैं। वर्तमान समय में बरलाज प्योठा, अर्की, पलोग, सैंज, धारड़, शमोती, डुडाणा, घुमारी, छमरोल, खजला, धामी, बाइचड़ी, आदि गांवों में आज भी जीवन्त है।

लोक संस्कृति की इस विरासत को संरक्षित करने की आवश्यकता है।

25

लोक नाट्य बरलाज के प्रमुख-प्रसंग

सर्वप्रथम सृष्टि रचना में देवताओं तथा नारायण का नाम लेते हुए लोक गायक रामायण कथा बघल्याणी बोली में प्रारम्भ करता है - इसे 'साजना' अर्थात धरती के सृष्टि (सजाना) कहा जाता है - सदा भवानी दायिनी, गौरी पुत्र गणेश तीन देवता रक्षा करे, ब्रह्मा, विष्णु-महेश।

साजना

भाइयो - न रे थिया देव रे दानवा, न रे थिया पूजणेहार
देव रे यो दानव यो साजिया, साजिया रे वेद-बचार

भाइयो - गाइया न थिया, यो बे रे बाछिया, न बे थिया दुहणेहार
गाइया रे यो बाछिया, यो साजिया, साजिया रे दुहणेहार

भाइयो - धरती रे अंबर न थिया, न रे थिया पूजणेहार
धरती रे अंबर यो साजिया, घूरा साजिया यो बे चार

भाइयो - नांओं वे लइयो आप वे नरायणो रा, जिन्ने बाहरे पृथ्वी साजिया
नांओं वे लइयो ब्रह्मा बे विष्णुओ रा, जिन्ने बाहरे वेद बचारेया

भाइयो - नांओं वे लइयो धरती माता रा, दुनिया रा मार वे संभालो
नांओ वे लइयो चंद वे सूरजो रा, दुनिया रवे लोये जो कराओ

भाइयो - नांओं वे लइयो शिव राजा शंकरोरा, दुनिया रवे रिजक जो बंडाओ
नांओं वे लइयो पांज वे पांडवा रा, दुनिया रवे न्याय वे सिखाओ

भाइयो - नांओं बे लइयो दशरथ बे राजेरा, जो रे पिता रामो रा भी थिया
नांओं बे लइयो सिाया बे माता रा, जो रे पुत्री जनकोरी थिया

भाइयो - नांओं बे लइयो राम बे लछमणो रा, जिन्ना रीया गार्णी आस्सा वे रामायणा।
नांओं बे लइयो देवा बे कुरगणा रा, जेस रा जो करना यो कारजा।

'साजना' (सृष्टि का सजाना) के बाद रात्रि भर के लिए राम की पवित्र कथा बरलाज में अप्रत्यक्ष रूप से पधारने के लिए 'आह्वान' (शादणा) निमन्त्रण दिया जाता है - इसमें स्थानीय देवताओं को नाम लेकर श्रद्धापूर्वक बुलाया जाता है -

"ओ पैहले आया रे देवा म्हारे कुरगणा, आस्सा गाणे बे रामो री रामायणा
सच-चूठ जाणो बे रामा। आसागाणे रे रामो रे बोल।
सच-झूठ जांणो बे रामा। आसे शादे रे औखिया रे देवा।
दूजे आया रे देवा म्हारे धाराबालेया, आसागाणे रे रामो री रामायणा
सच-चूठ जाणो बे रामा
आसे शादे रे औखिया रे देवा। सच-चूठ जाणो बे रामा।
तीज्जे आया रे देवा दरबाणीया, रैय्या देओ रे दरो पांदे खड़ेया।
सारी रात गाणे देवा बोल। आया म्हारी रक्षा दे ओ देवा।
चौथी आया रे माता म्हारी मनसा, करी जाया रे मानो रीया पूरीया,
बैठी जाया बे आपणे ओ आसने।
आस्सा गाणे रे रामो रे बोल!
सच-चूठ जाणो बे रामा।

राम-जन्म

रामजन्म, दशरथ-श्रवण प्रसंग, आदि के पश्चात राम वनवास का प्रसंग गया जाता है -

भाइयो- आस्सा गाणे रे रामो रे बोल। सच-झूट जाणो रघुनाथ।
आज अयोध्या हुइया बधाइया, आयोध्या हुआ राम जन्म
सई देओ रे बुलाओ पंडतो, राजतिलको रा मुहुरत दखाओ।

बणवास

भाइयो- "रामो खे रे हुआ चौदहरा वरशा रा वणवास
भरतो खे हुआ राजतिलक।
बणो खे रे चले राम-चन्द्र
सई आये रे लछमण-सीता
दशरथ बोलो-ए सुमन्त।
मनाई लैय्या रे राम चन्द्रो खे।"
"पंचवर्टीया पहुंचे जुध्या रे देवते
सुमन्तो री एक भी ना सुणी।
वापस रे जुध्या सुमन्त जे आये।
दशरथो खे रे समाचार सुणाये।"
पंचवटी में मारीच (सुइनृ) का स्वर्ण-मृग बनकर आना।
सीता राम से स्वर्णमृग को पालने के लिए पकड़ कर लाने की दृढ करती है -
'जे न धाये सृइने रे मिरगो, हाऊं खांदी ना खाण
जे धाये सृइने रे मिरगा हाऊं खांऊ तेबे ई खाण।'
यहां लोक कथाकार स्वेच्छा से मृग को मारने की कथा कहता है जबकि एक अन्य पाठान्तर में सीता मृग को पकड़ने को कहती है -
"ओ हाथे लओ रामा धनुषवाणो, आयो बांई पण्यारे ....
ओ वाण से सुइनृ खे बाया .... सुइनृ पूरबा खे धाया ......
वाण से पूरबा खे बाया ...... सुइनृ उत्तरा खे धाया ....
सुइनृ पच्छमा खे धाया .... वाण से पच्छमा खे बाया ....

सुइनू एबे इन्दरो गे धाया ...... बाण रामे इन्दरा खे बाया ...
बाड़्डी दीत्ते ढ़ाई बे नराऊँ, किलका बे सुइनुआ मारो।
लओ से लछमणो रा नांओं, किलका आओ सिया रे कानो
फोड़ी शे शेट्टो धनुषो रामा, बे बाड़्डे ढ़ाई वे नराऊँ।"

शूर्पनखा का पंचवटी में आना

भाइयो - चली आओ सुपनखा राक्षणी रामो रीयां पंचवटीया झुग्गीया दे आओ,
राम करो थे घोर बे तपस्या, सुपनखा नाच बे करो।

भाइयो - बोलो-जेड़ा सोयणा तूं बे नरायणा, तेड़ी बांकी मैं वी नार
मेरी तेरीं बणो जोड़ीया। आस्या स्वामीया ब्याडू बे काराणा।

भाइयो - क्षत्रीया रे आए बहणे धरम, एक्की शादीए दूर्जी न कराओ,
साथे भाई मेरा लछमण कंवारा, तेस तूं पूछी बे लैय्या।

भाइयो - चली आइया सुपनखा राक्षणीया, लछमण जत्तीओ रीया झुग्गीया
लछमण करो था बे तपस्या, सुपनखा गोरीया नाच बे करो।

भाइयो - जेड़ा सोयणा तूं बे नरायणा, तेड़ी बांकी मैं बीर नार,
मेरी-तेरी बणो वे जोड़ीया, आस्सा स्वामीया ब्याडू कराणा।

भाइयो - भरे रे क्रोधा दे यो लछमणा, धनुषा दे बाण वे चढ़ओ
राम बोले ठहरया बे यो लछमणा, त्रियांखे बाण भी नी बांदे।

X X X X X

देखे - एबे लछमण कमरा ते अव्बल कत्तीरा काड़ूओ
सुपनखा रा नाक कटी देओ ओर चोटू काट्टो।

देखे - सुपनखा है से राड़-'पुक्वार कर दी दशुओ रीया लंका जाओ
दशुओ रीया कचहरीया दे बड़े-बड़े दानो हाजर ओ।

देखे - दशु राजा सुपनखा खे देख पूछणे लग्गो,
बोल बइणे तेरा नाक-चोटू किन्ने कटेया।

रावण यह सुनकर झिक्की-मंजोली (बिस्तर पकड़ना) पड़ जाता है वह अपने मंत्री सुइनू (मारीच) को बुलाता है और छल करने को कहता है। उसे आने वाली भयंकर विपत्ति का आभास होता है। लोक गायक ने क्रुद्ध प्रकृति के वर्णन से स्पष्ट किया है।

भाइयो - दशुआ बोलो, सुइनुआ ओ मेहतेया, बड़ा आया गिड़ना-गर्जणा
ढ़ाक टोलेया सुइनुआ, ड्वारिया, जान आस्से लऊंगे बे बचाई।

भाइयो - दक्खणा ते लग्गीया यो बिजलिया, पूरबा ते बादल छाया
बड़ी आई सुइनुआ न्यार-गुवार, पाणी-आया सुइनुआ बरखा हुई।

भाइयो - जे वे थिया हियोरा काहला, कऊं बे छाड़ूडी सुइने री माला,
जेस रे जो आये राजा कारणा, सेई सिया पाणियों खे आओ।

भाइयो - जो वे चमको धूरा बिजलिया, सिया रा रे गागरू चमको।
जो वे आइया न्यार वे गुबार, सिया नैणे काजल लगाये।

भाइयो - जो वे शुणुओ गिड़ना, गर्जणा, सहेलिया गाओ मंगलाचार।
जो वे चलो पोण राजा बाऊंदला, सिया रा चाररु फराको।

भाइयो - सुइनुआ, जाया बे प्रण्यारे, मां बे जाणा जोगीओ रीया झुग्गीया
तू वे छल्या सिया खे पण्यारे, मां बे मेरा जोगीओ रा करना।

शिवजी के बागीचे में राम-लक्ष्मण का पहुँचना - शिवजी का कोढ़ दूर होना।

देखे - आगे शिवजी रा वगीचा थिया। रामचन्द्र-लछमणो खे हुक्म करो।

देखे - माया रा सुइने रा टका बणाओ। लछमणो गे देई देओ।

देखे - भाई बागो दे अम्बो रा बगीचा ए। जे बागो दे मालीओ तो टका देणा।

देखे - दो फल अम्बो रे तोड़ी के ल्याया। जे बागे मालीओ तो देणा,

नई तो डालो मेरे छाड़णा।

देखे - हणुमान परगटओ। लछमण ओर हणुमानो रा जुद्ध लग्गो।

देखे - हणुमानो रा आधा अंग रामो साथी जुद्ध करो, आधा अंग शिवजी गे जाओ।

और देखे - एड़ा शूरबीर कोई बाको दे आओ, तिन्ने मेरे संद-संद तोड़ी दीत्ती जी।

और देखे - मेरे बोले जुद्ध नी लड़ूओ, से तूसा जुद्ध आपू लड़ी लैणा।

और देखे - रामचन्द्र ओर शिवजी रा जुद्ध लगो। पैला बाण शिवजी मारी देओ।

और देखे - रामचन्द्र पौणी देड़्वाई देओ।

और देखे - शिवजी रीया बाएं धत्थो रीया गूठीया दे कोढ़ थी।

और देखे - शिवजी खे वरदान था भई जेबे औतार बाण बाओ तो गूढी ठीक हो।

और देखे - रामचन्द्र बाण बाओ। शिवजी री गूठीया दे लग्गो। गूठी ठीक हुई जाओ।

हनुमान-कली

भाइयो - देवतेया री बैठो बे मसलता, बैठे देवता करो बे मसलता
छः महीने हुए रे सिया राचीया, तूसे देवतेया लई न सम्हाल।

भाइयो - एड़ भी न जम्या बे रमायणी दे, जो रे जाओ लंका बकीलिया
हणुमान जम्या बे रमायणी दे, जेत्ती भेजो तेत्ती से जाओ।

भाइयो - हणुमान रामो रेया घालका, लंका जाणा रामो री बकीलिया।
जाणे खे रे जाऊँणा नरायण, मोड़दाना बड़्डेया रे बोल।

भाइयो - छः महीने लग्गो रामा जांदिय खे, छः महीने हाटदे लग्गो,
बरशा रा बानय खरचा, हाटी आऊंगा बरशा ध्याड़े।

भाइयो - छः महीने हुए सिया राचीया, हणुमान बादो ते आया,

ना रे सिया हुणमानो पछयाणो, ना हणु सिया खे पछयाणो

भाइयो - हाथो रीया लई मूंदिया, सिया खे रे सेई वे नशाणियां
जेबे देखो हात्थो रीया मूंदिया, ताखे हणुआ लऊं बे पछयाणी।

राम द्वारा तीर पर चढ़ाकर हणुमान को लंका के महल दिखाना

भाइयो - खड़े रामे रीड़ीया ते धनुष चक्या, धनुषे दे चढ़ेया बेटा हणुआ
दखणा खे दे या बे यो नजरा, लंका तांते दिश्शो कि नई।

भाइयो - सात दिश्शो लंका यो सूरज, होर दिश्शो हरिया हरठो
धारा दिश्शो धुइयां बे गुबारा, न्योलो बोलो बण बे बिबुहुआ।

भाइयो - जो दिश्शो सात बे सूरजा, मैहल दिक्खो लंका रे मन्यारे
जो रे दिक्खो हरिया यो हरठां, बाण दिश्शो राजे दरशुए रे हरे।

भाइयो - धनुषा ते उतरो यो हणुआ, चरण जो रामो रे बांदो
छ्वाला भरो हणु यो उर्ल्टीया, लंका रा रस्ता टटोलो।

रथाव

और देख - हणुमान या से मिया खे जवाब करो। माता एकी पला खे हारवी बन्द करी दे।

और देख - हणुमान आपणा विराट रूप दशो। जितने लंका दे दानो थे से हणु रे मुंओ दे जल दे दिश्शो।

और देख - माता एबे हारवी खोली दे। हणुआ तूं छोटा जा बांदरू बणी जा।

और देख - नई तो तेरे प्राण निकली जाओ। सिया हणुमानो खे आज्ञो देओ।

और देख - हणु बागा दे चल्या जाओ। बागो रा नपाता करने जाओ।

छोड़का

आज्ञा देओ सितला हणु बागो खे जाओ ...... बागे पहुंचेया हणुआ बड़ा चयमत करो।

नौलखा पवनू सेना बाग ज्याड़ने लाया ..... धारा ते देओ ग्वालू हाऊषा बाग बांदरे ज्याड़े या।

आये बे लंकारे दानो .... मेघनाथ दानुए एबे हाणु या थाम्या .....।

गले पाओ जेवटी झंझोड़ने लाया ..... आपणीया गौऊता हाणु आपिये दश्शो

सौ मण ल्याओ रुइयां सौ ते लोरा घड़ा ..... अंधे दानो लंका रे सेई काम करो ......

लाई लंगूरा दे बोलो आग ......2 केसी रा मुंह फूख्या, फूक्की दानो री सभा

बोल

भाइयो –	ठारह पदम् चढ़ो बे रमायणा, डेरे पड़ो बइया रे बागो
	हाणु बोलो अंगदा वो पहरुआ, रैय्या रे रमायणी रा रखवाला
भाइयो –	छबाल भरो हणुआ यो उल्टीया, जाइरो बैठो दशुओ रे बेहड़े।
भाइयो –	दशु राणी खेलो थे यो चौपड़, मेघ डम्बर करो रख वालीया।
भाइयो –	हाथे लओ घनुषा यो हणुआ, मेघ डम्बरो खे बाओ।
भाइयो –	मारी दिल्या मेघ डम्बरा, जाश शेट्टो दशुए रे बेहड़े।
भाइयो –	राणीए बे बोल मंदोदरीए, जेसरा जो करूं थे आसरा।
भाइयो –	हणुमाने दरी पांदे मारेया, लाश शेट्टी दरो रे अन्दरा।
भाइयो –	ठारह पद्मा चढ़ो रमायणा, थरीया रा कांबो गगन लंका रा।
भाइयो –	एड़ी हिलो गढ़ लंका गगन, जेड़ा हिल्लो थालुए रा पाणी।
भाइयो –	एड़ा घिरेया लंका रा दशुआ, जेड़ा सूरजो बादल घेरी लौ।
भाइयो –	सीख मत देया मेरी राणीए, दशे मेरे बचणे रा उपाय।

भाइयो - एक सिया करे बे स्वर्णो री, दूजी सिया रामो री हटाया।

भाइयो - देवतेया रे लग्या वे चरणे, तूसा खे राजा लज्जा भी न आओ।

दोहा - ओच्छी जात तुम त्रिऊंओं की, ओछी विध बताएं
दो आये राम-लछमण, मैदानों दे देऊं ढ़ाये।

रथाव (अहिरावण-वध)

भाइयो - चली आया दानो वे प्यालो रा, बेहड़े राणी सुपणा रे आओ।
दानो बोलो राणी यो सुपना, हणुमान जुद्धो खे शादो।

भाइयो - बरजूं थी अंधेया जोधा, तैं बे मेरा बरजेया न मान्या।
महलो जे दे डाली दे सतरंजीया, चार बाजीया चौपड़ा री लाओ।

भाइयो - खेलो चार बाजीया यौ चौपड़ा, खेली लऊंगे पीछले ध्याड़े रा।

भाइयो - बणाई बे देया झींझण रसोइया, खाई वे लऊंगे पिछले ध्याड़े रा।

भाइयो - बछाई देया महला दे बछौणा, पल भर सौणे री लाणी घड़ी।

भाइयो - सई बे लऊंणे पिछले ध्याड़े रा, फिर राणिये मिलणे कि नईं।

भाइयो - व्याडू रे जे देया मेरे कपड़े, शीरो री देया गिजा पगड़ी।

भाइयो - कानो रे जे दे या बरागर, गलो रा देया बे तन्दीरा।

भाइयो - बाहीं रे जो देया सलांगणा, श्यामीकरण घोड़ले ल्याओ।

भाइयो - हाथो रीया देया वे बरछीया, काटी मेरी स्वर्णो री ल्याओ।

X X X X X

भाइयो - एड़ चल्या दानो प्याला रा, जेड़ा चढ़ो चांद यो पून्या रा
आई लौ रे सवें मदाने, एड़ा लगो दानो जेड़ा बज़ा ....।

भाइयो - बाण बाओ दानो प्यालो रा, हणुआ पौणी दे डवाओ।

भाइयो - बाण बाओ दूजा वे दानुआ, हणुआ बज़े सम्हालो।

भाइयो - बाण बाओ तीजड़ा वे दानुआ, हणुमान धरणीया गाड़ो।

भाइयो - तीन बाण मैं वे सम्हाले, एक बाण मेरा बे सम्हालेया।
भाइयो - खण्डा बे छड्वाओ रे हणुआ, किलका रे गइणो खे भरो।
भाइयो - ढ़िण बेढ़िणा, ओ हणुआ, खण्डा बे रे शीरो खे बाओ।
भाइयो - मारी बे दित्या दानो प्यालो रा, प्यालो फिरो राम बे दुहाइया।

बोल (लक्ष्मण-मेघनाद जुद्ध)

भाइयो - लछमण बोलो बे यो रामो खे, मां बे भाइयो जुद्धो खे जाणा।
त्यार होया लछमण जुद्धो खे, सवें रे मदाने आया।
भाइयो - कागज जो लिखो यो लछमणा, मेघ्घनाथ दानो खे शादो।
कागजो जो पढ़ो बे सुलाचना, ताखे देवते जुद्धो खे शादो।
भाइयो - हाथो देया छिणी खण्डा, मां बे राणीये जुद्धो खे जाणा।
भाइयो - त्यार होया मेघनाथ दानो, आई बे रैय्या रवें मदाने।
भाइयो - दोनो जो घुलीया ओ बज्रा, बाण भाई रे कोई न बाओ।
भाइयो - बाण बाया मेघनाथ दानो, लछमण आकाशो खे ड्वाओ।
भाइयो - बाण बाया लछमणे पइला, मारी दित्या मेघनाथ दानो।
भाइयो - अन्दरोल तोड़ो बे सलोचना, आई वे रओ सवें मदाने।
भाइयो - रामो खे बे रे करो जो अरजा, शिर देओ मेरे यो स्वामियो रा।

रथाव

और देख - बाण लछमण मेघनाथो खे बाओ। मेघनाथो खे मारी देयो।
और देख - शिर घड़ा ते अलग करी देयो, धड़ लंका रे चबाटे शेट्टी देयो।
और देख - शिर रामो रे डेरे खेल्याओ, राणी सलोचना रामो खे जवाब करो।
और देख - मेरे स्वामीओ री शिरी माखे देई देओ। राम सलोचना खे जवाब करो।
और देख - जे तू बड़ी भारी सत्ती ए, आपणे स्वामीओ रीया शिरीया

साथ वात करी लौ।

और देख - दोनो जणे गल-बात करो। सलोचना मेघनाथो री शिरी लई जाओ।

और देख - सलोचना स्वामीओ साथे सती हुई जाओ। सलोचना सुर्गो खे जाओ।

राम-रावण जुद्ध

भाइयो - भाइया रे मेरेया विभीषणा, कुछ भेद देया यो दशुए रा।
जेत भेद राजा दशुएरा, ताखे राज लंका रा देऊं।

भाइयो - सात डिबरे वे यो शिंबलो रा, जेदे रामा लोहे रा पिंजरा।
पिंजरे दे होश वे दशुए रा, पिंजरा जे तोड़ेगा बे नरायणा।

भाइयो - नामीया दे अमृत-कुण्डुआ, बाण रामा नामीया दे बाया
तेवे मरो लंका रा दशुआ, हटी आया तेबे आपणी रमायणा।

भाइयो - एड़ा कोई जम्या बे रमायणी दे, जो रे ल्याओ लोहे रा पिंजरा।
त्यार होया हणुआ यो जाणे खे, रूप हणु कौवे रा करो।

भाइयो - छवाल भरो हणु उल्टीया, जाई रो बैटों शिंबलो रे डाले।
वांये हात्थे देयो हणु झपटा, पिंजरा वे तोड़ी के ल्याओ।

भाइयो - तेलो रीया तपीया कड़ाइया, औषत राम तलणे लग्या।

भाइयो - वास उड़डो सरस समाणो दे, बास आओ बेड़े दशुए रे।

भाइयो - तीर्कवाण बाया बे नरायणे, बीह भुजा रे दशुए री बाड्डी।

भाइयो - दशवाण बाये बे नरायणे, दश शीश दशुए रे बाड्डे।

भाइयो - एक बाण बाया वे नरायणे, तोड़ी दित्या अमृत-कुण्डुआ।

भाइयो - मारी दित्या लंका रा दशुआ, लंका फिरो राम बे दुहाइया।

रथाव

और देख - रामचन्द्र लछमणो खे जवाब करो। माई 18 पुराण, 14 शास्त्र रावणे पढ़े।

और देख - तू रावणो ते कुछ शीख सलाह पूछीलओ। लछमण शिरो कनारे चला जाओ।

और देख - महाराज आस्सा खे कुछ शीख-सलाह देई देओ। रावण मुख जबानी कुछ नी बोलो।

और देख - लछमण है से रामचन्द्रो गे आई जाओ। रामचन्द्र लछमणो खे पूछो।

और देख - महाराज, मां साथी दशुआ मुख जबानी नी जपो। भाई केस कनारे ते तूं सलाह पूछेथिया।

और देख - 18 पुराण, 14 शास्त्र रावण पढ़या या थिया। पैरो कनारे जा और शीख-सलाह पूछ।

और देख - लछमण दशुए रे पैरो कनारे चला जाओ। रावणो ते शीख-सलाह पूछी लाओ।

और देख - मेरे ढ़ाई पौड़ीया सुर्गो खे लगाणे खे रइया थिया। काल लगाऊंगा सोच्चा से काल मेरा आईगा।

और देख - राणी मंदोदरी अन्दरोल तोड़ो ओर सवें मदाने आओ। राम-लछमणो पल्लुओ ते पकड़ो।

और देख - मेरीया लंका री बसूली करी लौ, तेबे जुध्या जाणे देऊं, नईं तो नईं जाणे देऊं।

और देख - राज लेकारा राणीए तू करी लौ, विभीषण तई गे बजीर रही जाओ।

छोड़का

हो चले चल्या अंगदा, आसा जुध्या जाणा
जुध्या जाई रो अंगदा, खाणा दूध और भात

एर्नीम्याओ रात, खाओ पूता रा मांस
देवनेया रे साइया वधाइया, लंका हुआ शोर-शराबा।

बोल

भाइयो - धूरा-धूरा रे शादे बे यो देऊते, चऊं रे धूरा खे आपणीया जाओ!
रामे शादे ये वाहे वे वाहे री, तूसा देऊतेया बिसरी रो नाणा।

भाइयो - आसे गाइया रामो री रमायणा, सच-झूट जाणो भगवान।

भाइयो - जेती गाइया रामो री रमायणा, तेन्नी देया पूतो री वधाइया

भाइयो - जुग जुग जीयो शुणने वाले यो, जिन्ने शुर्णी रामो री रमायणा

भाइयो - जियो एर्नी री नगरीये, फूली जाय सुइणी रे फूला

भाइयो - जे वे गीणूंगे महल-मन्यारे, लगी जाओ वरशो-ध्याड़े

भाइयो - हवाल भरी हपू वे यो उर्लीया, लाई रे बैटो वज्रा जानिया

भाइयो - जो रे रस्ता जाओ यो वांऊआ, लंका जाओ रे बाईं वे पण्यारे

भाइयो - जो रे रस्ता जाओ रे यो दाइणीया, लंका जाओ रे शहर-बजारे।

X X X X X

भाइयो - जुग-जुग जिवे देवा मंदोड़ा, सदा फूले सुइने रे फूले
रामचन्द्र शादे थिये औखा रे, करा गोये रामो रा जे पखाला

भाइयो - निऊंने रे जे आणा थिया देवा मंदोड़ा, पूजी की छाड़्या वे विसरजी रो
एवे बैठे आपणे मंदरे, सदा फूले सूइने रे जे फूले।

भाइयो - जुग-जुग जिवे देवा धारावाले या, सदा फूले सुइने रे जे फूले
रामचन्द्रे शादे थिये औखिया रे, करी गोए रामो रा जे पखाला।

भाइयो - जुग-जुग जिवे बे रमायणी शुणने वालेयो, सदा फूले सुइने रे फूलों
एवे जाए धूरो दे आपर्णा, सदा फूले सुइने रे जे फूले।

भाइयो - जुग-जुग जीवे चऊं धूरा रीया मजर्तीया, सदा फूले सुइने रे जे फूले।
रामचन्द्र शादे थिये औखिया रे, करी गोये रामो ग पखाला।
एवे बैठो आपणे वो मंदरे, सदा फूले सुइने रे जे फूले।

26
संदर्भ-सूची

1. श्रीमद्भागवत (सचित्र) पं. रुपनारायण पाण्डेय, स्कन्द, 9-10 अध्याय, 43, हिन्दुस्तानी बुक डिपो, लखनऊ - 1997, 1940ई. विक्रमी।
2. हिमाचल लोकनाट्य धाज्जा-सांस्कृतिक तथा सांगीतिक अध्ययन, प्रो परमानन्द बंसल, माडर्न बुक हाउस चण्डीगढ़, 2005
3. 'सोमसी' जनवरी-दिसंबर 2013 'लोक नाट्य धाज्जा में गीतप रामलाल पाठक।
4. 'हिमप्रस्थ' मार्च 2014, 'पारंपरिक पहचान से जुड़ा, लोकनाट्य धाज्जा-कृष्णचंद महादेविया।
5. विपाशा सितंबर-अक्टूबर 2005, बिलासपुर जनपद के लोकनाट्य डॉ. अनीता शर्मा
6. सोमसी अक्टूबर, 88, पंच मलंग का स्वांग
7. ए विलेज सर्वे ऑफ शकरा 1960
8. गजेटियर ऑफ महासू डिस्ट्रिक्ट-1910
9. अध्यात्मरामायण - गीताप्रेस गोरखपुर, 2014
10. भारतीय समाज का ऐतिहासिक विश्लेषण-भगवतशरण उपाध्या 1950
11. 'बरलाज' की गायक-मण्डली, ग्राम-प्योटा (अर्की) के बरलाज गायन से।

लेखक परिचय

नाम : अमरदेव आंगिरस

शिक्षा : एम.ए.,एम.फिल.,बी.एड.,
उर्दू, टांकरी प्रशिक्षित,
सेवा. प्राध्यापक, प्राचार्य(कार्य.)

गांव : छोटी काशी बातल (अर्की) 1 अगस्त, 1948

(आजादी के बाद बदलते समाज, मशीनीकरण एवं संचार-माध्यमों के कारण लोकनाटक विस्मृत से हो गए हैं किन्तु हिमाचली लोकनाट्य धाज्जा, करियाला एवं बरलाज आज भी अपनी सामाजिक महत्ता के कारण जीवन्त हैं। नयी पीढ़ी इस समृद्ध विरासत से भली-भांति परिचत हो सके - इस दृष्टि से यह पुस्तक पठनीय एवं उपयोगी सिद्ध होगी - ऐसा विश्वास है। यह पहाड़ी भाषा हिमाचली के स्वरूप में भी सहयोगी सिद्ध हो सकती है।)

लेखक की प्रकाशित पुस्तकें :-

1. देवता की उत्पत्ति एवं लोक-विश्वास
2. घाटियों में बिखरी लोक-कथाएँ
3. सोलन जनपद की लोक देव-परम्परा
4. राष्ट्र अस्मिता (काव्य)
5. बघल्याणी लोकनाट्य 'बरलाज'
6. देव कुरगण मंढ़ोड़ एवं कर्णावतार माहूनाग देव - (लोक गाथाएँ)